ग्रीन रिवोल्ट

हरित-नीरा रहे वसुंधरा

पेजः 4

हिमाचल में दरक रहे हैं पहाड़ के पहाड़, 462 सड़कें बंद

रविवारीय, 01 - 07 अगस्त 2021 वर्ष- दो, अंक - 52, रांची, कुल पृष्ठ 4 हिन्दी साप्ताहिक R.N.I. No. JHAHIN/2019/78094 www.greenrevolt.news मूल्यः 5 रूपये

ग्रीन रिवोल्ट के पाठकों से आग्रह है कि आप पर्यावरण, कृषि, जल संरक्षण, पशुपालन, बागवानी , पेट्स, वृक्षारोपण से संबंधित खबरें, समस्यायें, लेख,सुझाव, प्रतिक्रियायें या तस्वीरें हमें अवश्य भेजें। हमारा इमेल एवं ह्वाट्सएप नंबर है।

greenrevolt2019@gmail.com

9798166006

धनबाद अल्लापुजा स्पेशल ट्रेन में स्थाई रूप से कोच संख्या मे वृद्धि

रांची : यात्रियों की अतिरिक्त भीड़ को कम करने के लिए ट्रेन संख्या 03351/03352 धनबाद – अल्लापुजा –धनबाद स्पेशल ट्रेन में स्थाई रूप से कोच संख्या मे वृद्धि की गयी है । ट्रेन संख्या 03351 धनबाद –अल्लापुजा स्पेशल ट्रेन में 01-08-2021 से स्थाई रूप से वातानुकूलित 03- टियर का 01 अतिरिक्त कोच लगेगा। ट्रेन संख्या 03352 अल्लापुजा – धनबाद स्पेशल ट्रेन में दिनांक 04-08-2021 से स्थाई रूप से वातानुकूलित 03- टियर का 01 अतिरिक्त कोच लगेगा। वातानुकूलित 03- टियर का 01 अतिरिक्त कोच लगने के बाद इन ट्रेनों का कोच संयोजन इस प्रकार होगा...

एस एल आर के 02 कोच, सामान्य श्रेणी के 04 कोच, द्वितीय श्रेणी स्लीपर क्लास के 12 कोच, वातानुकूलित 03- टियर के 03 कोच, वातानुकूलित 01- टियर का 01 कोच एवं रसोई यान का 01 कोच , कुल 23 कोच होंगे।

फेल हुयी रांची की जलनिकासी

वरीय संवाददाता

रांची : खबर में लगी तस्वीर पिस्का मोड़ से आगे बढ़ने पर दायीं ओर बसे पंचशील नगर के प्रवेश की है। इसमें दायीं ओर एक बरसाती नदी दिख रही है और बायीं ओर सड़क है। हकीकत में ये सड़क कभी पूरी तरह नदी का हिस्सा थी और यह बरसाती नदी आगे तकरीबन एक किमी जाकर कांके डैम में मिल जाती थी। यह नदी भारी बरसात में इस रिहायशी इलाके के लिये ड्रेनेज का काम करती थी ।और बड़ा क्षेत्र जलमग्न होने से बच जाता था, लेकिन गर्मियों में सूख जाने पर इसके कैचमेंट और ग्रीनलैंड को तेजी से बेच दिया गया और पूरे नदी पर ही एक बड़ी और घनी बस्ती बस गयी। अब नदी एक पतले से नाले में तब्दिल हो गयी है जो घनघोर बारिश होने पर उफनती हुयी पूरे पंचशील नगर में नीचले तल्ले के मकानों को जलमग्न कर देती है। पंचशील नगर इलाके की कुछ साल पहले जब नगर निगम ने जांच की तो पता चला कि पूरा इलाका ही नदी उसके ग्रीनलैंड और कैचमेंट पर बसा हुआ है। लेकिन तब तक देर हो चुकी थी और इतने बड़े इलाके से घरों को तोड़ना और अतिक्रमण हटाना सरकार के बूते के बाहर की चीज थी।

पंचशील नगर का वाकया सिर्फ एक छोटा उदाहरण है। रांची ही नहीं बल्कि दिल्ली, मुंबई, चेन्नइ हर नगर में ऐसा हो रहा है और मॉनसून में वहां बाढ़ आती है। रांची में नदियों के आस पास अतिक्रमण और अवैध निर्माण के

पिस्का मोड़ से आगे पंचशील नगरः नदी को गायब कर अतिक्रमण से कॉलोनी बसा अब बारिश में पूरी कॉलोनी जलमग्न हो जाती है

वक्त सरकार सोयी हुई रहती है। अखबारों में खबरों या सूचना पर भी उसकी नींद नहीं टूटती । बाद में कोर्ट के आदेश और सख्ती के बाद वहां अतिक्रमण हटाने के नाम पर कुछ कमजोर लोगों के मकान उजाड़ दिये जाते हैं।

ऐसी लापरवाही के कारण ही रांची शहर में जलनिकासी के रास्ते बंद होते जा रहे हैं और भारी बारिश में शहर के बीच के इलाके , अपार्टमेंट , कॉलोनियां जलमग्न हो जाते हैं। हाल की हुयी दो दिनों की बारिश में अरगोड़ा में मुख्य सड़क ही बंद हो गयी । शहर के कई इलाके तो ऐसे हैं जहां बरसात के बाद पानी के निकलने का कोई रास्ता ही नहीं है। वहां हर हाल में जल जमाव होना ही है। हलधर प्रेस गली हो या रातू रोड के कब्रिस्तान के पास की सड़क या पंडरा की सड़क।

अगर हम भविष्य देखें तो रांची जैसा शहर जो कभी बरसात में अपने सुहावने दृश्यों के लिये जाना जाता था वह इसी तरह से अतिक्रमण कर अवैध रूप से बसते गया तो बरसात में यह बिहार के किसी जल जमाव वाले शहर की तरह हो जायेगा।

कुछ साल पहले पूरे रांची शहर में करोड़ो की लागत से नालों का निर्माण किया गया था। दलील थी कि इसके बाद शहर में कहीं जलजमाव नहीं होगा,ड्रेनेज ठिक हो जायेगा, पर इंजीनियरों ने इस पर कोई ठोस सर्वे नहीं किया। ठेकेदार अपनी मनमर्जी से नालों का निर्माण कर चलते बने।अब वो नाले बेकार साबित हुये।

कभी एक बूंद पानी नहीं टिकता था रांची में

रांची की बनावट ऐसी है कि यहां कभी भी तेज बारिश के बाद भी पानी किसी भी इलाके में टिकता नहीं था। बिहार के पटना, दरभंगा, समस्तीपुर जैसे इलाकों से आकर यहां बसे लोग सुकून के साथ कहते थे कि रांची बहुत सुरक्षित है कि यहां शहर में कोई इलाका जलमग्न नहीं होता। बिहार के कई शहर बरसात के पानी के बाद पानी से भर जाते हैं और कई सप्ताह तक लोग पानी से होकर ही आना जाना करते हैं।

लेकिन अब रांची में भी जलनिकासी के प्रत्येक मार्ग को अवरूद्ध करने, नदियों नालों को खत्म करने के बाद पटना, दरभंगा, सस्तीपुर जैसे शहरों वाली नारकीय स्थिति बनने लगे तो कोई आश्चर्य नहीं।

ड्रेनेज सिस्टम देखने यूरोप और इटली गयी थी झारखंडी मंत्रियों की टीम

कुछ साल पहले झारखंड के मंत्रियों और अफसरों की एक टीम यूरोप के दौरे पर गयी थी। तब झारखंड के एक मंत्री जी ने मीडिया को बड़े गर्व से बताया था कि हम इटली के वेनिस शहर को देखने जा रहे हैं, हमें वहां ये देखना है कि नहरों के इस शहर में जलनिकासी और वेस्ट मैनेजमेंट कैसे होता है।

अब ये तो पता नहीं चल पाया कि मंत्री जी की टीम और अफसरों ने वेनिस में क्या देखा और सीखा, पर ऐसा अवश्य देखने को मिलता है कि मॉनसून के बारिश में रांची के कुछ इलाके वेनिस की तरह जलमग्न जरूर हो जाते हैं।

राज्यपाल रमेश बैस ने राज भवन परिसर स्थित गुरू गोविन्द सिंह वाटिका में रुद्राक्ष का पौधा लगाया

राज्य में इथेनॉल उत्पादन में निवेशकों के लिये कई सुविधाएः पूजा सिंघल

रांचीः झारखंड सरकार राज्य को इथेनॉल उत्पादन में अग्रणी बनाने की कवायद में जुट गई है। इसके लिए उद्योग विभाग ने स्टेक होल्डरों के साथ मंगलवार को होटल रेडिशन ब्लू में झारखंड इथेनॉल प्रोडक्शन एंड प्रोमोशन पॉलिसी 2021 के तहत गहन विचार-विमर्श किया। उद्योग सचिव श्रीमती पूजा सिंघल ने विभाग के पॉलिसी रोडमैप के बारे में जानकारी दी।उन्होंने कहा कि 7 पॉलिसी को अगले दो माह के भीतर स्वीकृति दिलायी जायेगी। उन्होंने झारखंड में निवेश के लाभ को बताते हुए यहां के स्थानीय लाभ, इज ऑफ डूइंग बिजनेस, आवंटन के लिए लैंड बैंक में उपलब्ध भूमि, तैयार हो रहे इंडस्ट्रियल पार्क और सेज प्रोजेक्ट पर प्रकाश डाला। उन्होंने इथेनॉल उत्पादन में फीडस्टॉक के इस्तेमाल का सुझाव देते हुए कहा कि पूर्वी भारत के बाजार के लिए झारखंड आसानी से प्रतिदिन 600 किलोलीटर उत्पादन कर सकता है।

आकर्षक अनुदान है पॉलिसी में : उद्योग सचिव ने कहा कि पॉलिसी में पारिश्रमिक प्रोत्साहन का भी व्यापक ख्याल रखा गया है। इसके तहत एसएसएमई द्वारा 10 करोड़ और गैर एसएसएमई द्वारा 50 करोड़ तक के पूंजी निवेश पर 25प्रतिशत अनुदान की व्यवस्था है। ...शेष **पेज 3**

झारखंड में गन्ना और जैविक खेती को बढ़ावा देने की जरूरत : कुलपति बीएयू

संवाददाता

रांचीः राज्य में गन्ना और जैविक खेती का क्षेत्र लगातार बढ़ावा देने की जरूरत है. इस वर्ष बीएयू द्वारा संचालित गौरिया करमा फार्म (हजारीबाग) के 50 एकड़ क्षेत्र में जैविक खेती का लक्ष्य रखा गया है. सभी 16 कृषि विज्ञान केंद्रों को क्रॉप कैफिटेरिया स्थापित करने को कहा गया है. जिसमें बायोफोर्टीफाइड क्रॉप की प्रदर्शनी प्रमुखता से रहेंगे. पन्द्रह अगस्त के बाद विवि के वरिष्ठ पदाधिकारी निरीक्षण के लिए केवीके करेंगे. झारखण्ड राज्य में बीज उत्पादन को बढ़ाने में कृषि मंत्री और विभागीय अधिकारियों का सतत सहयोग मिल रहा है और इसके सुखद परिणाम दीखने लगे हैं. प्रतिवर्ष किन - किन फसलों, किन - किन किस्मों से कितना रकबा आच्छादित किया जाएगा और कितनी मात्रा में बीज उत्पादन होगा, इससे संबंधित अग्रिम बीज रैलिंग प्लान को तैयार कर विभिन्न क्रेता एजेंसियों को सौंपने की

आवश्यकता है. बीएयू में आयोजित 18 वीं बीज परिषद की बैठक की अध्यक्षता करते हुए कुलपति डॉ. ओंकार नाथ सिंह ने ये बातें कही।

कुलपति ने कहा कि उन्नत बीजों के प्रतिस्थापन मामले में ढांचागत सुविधाओं में वृद्धि तथा बीज ग्रामों की स्थापना में राज्य सरकार और बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के संयुक्त प्रयासों के फलस्वरूप झारखंड में गुणवत्तायुक्त बीजों उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है. जिसके फलस्वरूप राज्य खाद्यान्न उत्पादन के मामले में आत्मनिर्भरता की ओर अग्रणी है.

परिषद् के विशेषज्ञ डॉ एनपी सिंह, निदेशक, भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर ने कहा कि झारखंड में दलहन उत्पादकता का स्तर, पूरे पूर्वी भारत और उत्तर भारत (राजस्थान छोड़कर) से अधिक है. राज्य में चना के क्षेत्र और उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है. दलहन उत्पादन संबंधी प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए कानपुर आनेवाले सर्वाधिक किसान झारखंड और मध्य प्रदेश के ही होते हैं. राज्य के किसान गंभीरता से सीखने का प्रयास करते हैं. उन्होंने कहा कि जिन पौधा प्रजनन वैज्ञानिकों ने उन्नत फसल प्रभेदों का विकास किया है, उसे आगे बढ़ावा देने की जिम्मेदारी भी उन्हीं की बनती है. झारखण्ड प्रदेश की आवश्यकता का 10 % गुणवत्तायुक्त बीज का उत्पादन बीएयू के बीज एवं प्रक्षेत्र निदेशालय, कृषि विज्ञान केंद्रों,

.....शेष पेज तीन पर

फोर्टिफाइड चावल बच्चों और गर्भवती महिलाओं में बढ़ा सकता है आयरन की अधिकता

एजेंसियां : चावल में आयरन पौष्टिकता को अनिवार्य तौर पर जोड़ने (फोर्टिफिकेशन) की सरकार की रणनीति को अनुपयोगी और घातक बताने वाले अध्ययनकर्ता एचपीएस सचदेव ने कही है। चावल में आयरन के फूड फोर्टिफिकेशन मुद्दे पर 28 जुलाई, 2021 को प्रकाशित अमेरिकन जर्नल ऑफ क्लीनिकल न्यूट्रीशन में 18 सदस्यीय एक्सपर्ट टीम की ओर से एक चेतावनी जारी की गई है।

वैज्ञानिकों ने चेताया है कि एनीमिया जिसे हम साधारण तौर पर शरीर में रक्त की कमी के तौर पर पहचानते हैं उसे दूर करने के लिए चावल में आयरन का पोषण शामिल करना एक नई मुसीबत पैदा कर सकता है। एचपीएस सचदेवा ने कहा कि एनीमिया मुक्त भारत अभियान पहले से ही जारी है। सरकार दवाओं के जरिए आयरन, फोलिक एसिड और विटामिन ए की गोलियां बच्चों और गर्भवती महिलाओं को दे रही है। ऐसे में चावल में भी आयरन को जोड़ना एक खर्चीला और फिजूल का काम साबित हो सकता है।

नीरज अम्बष्ठ ने उत्कृष्ट कार्य करने वाले रेल कर्मियों को किया पुरस्कृत

संवाददाता

रांची :29जुलाई को मंडल रेल प्रबंधक नीरज अम्बष्ठ ने कोरोना वायरस की दूसरी लहर के दौरान उल्लेखनीय कार्य करने के लिए कार्मिक विभाग के 12 रेल कर्मियों को प्रशस्ति पत्र एवं नगद राशि देकर पुरस्कृत किया।

कोरोना वायरस के संक्रमण की दूसरी लहर के दौरान रांची रेल मंडल बुरी तरह प्रभावित हुआ एवं इसके कई अधिकारी तथा कर्मचारी संक्रमित हुये तथा कई कर्मचारियों का दुखद निधन भी हुआ। ऐसी विपरीत परिस्थिति में भी इन रेल कर्मचारियों ने पूर्ण निष्ठा के साथ अपने - अपने कार्य क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया एवं दिवंगत रेल कर्मियों के परिवार को त्वरित वित्तीय भुगतान एवं अन्य सहायता प्रदान की ।

इस उत्कृष्ट कार्य के लिए मंडल रेल प्रबंधक नीरज अम्बष्ठ ने श्रीमति सुधा सुमन बाखला, रवि कुमार तिर्की , जी रामा राव , बी सी बनर्जी , एन पी गुप्ता , बरिया कच्छप , राजन कुमार सिंह , श्रीमति संध्या सिन्हा , अशोक कुजूर , श्रीमति सुरल मुंडा , कुमार रवि यादव एवं शेषनाथ राम को प्रशस्ति पत्र एवं नगद राशि देकर पुरस्कृत किया । इस अवसर पर वरिष्ठ मंडल कार्मिक अधिकारी माणिक शंकर उपस्थित थे।

35 भारतीयों के उत्सर्जन से होती है एक व्यक्ति की मौत

ललित मौर्य

वहीं यदि अमेरिका की बात करें तो औसतन 3.5 अमेरिकी नागरिक अपने जीवन भर में इतना कार्बन उत्सर्जित करते हैं, जो एक व्यक्ति की मृत्यु के लिए जिम्मेवार है

औसतन 35 भारतीय अपने जीवन भर में इतना कार्बन उत्सर्जित करते हैं, जो एक व्यक्ति की जीवन लीला को समाप्त करने के लिए पर्याप्त होता है। अनुमान है कि एक औसत भारतीय अपने जीवन भर में करीब 127 मीट्रिक टन कार्बन उत्सर्जित करता है। वहीं यदि वैश्विक स्तर पर देखें तो दुनिया में एक औसत व्यक्ति करीब 347 मीट्रिक टन कार्बन उत्सर्जित करता है। इस लिहाज से देखें तो भारत द्वारा किया जा रहा प्रति व्यक्ति उत्सर्जन 173.2 फीसदी कम है। वहीं एक औसत अमेरिकी अपने जीवन भर में करीब 1,276 मीट्रिक टन कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जित करता है।

यदि अमेरिका जैसे संपन्न देशों की बात करें तो उनकी जीवन शैली ऐसी है कि औसतन 3.5 अमेरिकी अपने जीवन भर में इतना उत्सर्जन करते हैं जो एक व्यक्ति की जान लेने के लिए काफी होता है, वहीं साऊदी अरब के लिए यह आंकड़ा 3.1 है। यह जानकारी हाल ही में जर्नल नेचर कम्युनिकेशन्स में छपे एक शोध 'द मोर्टेलिटी कॉस्ट ऑफ कार्बन' में सामने आई है।हालांकि इसका यह मतलब नहीं है कि 3.5 अमेरिकी या 35 भारतीय मिलकर एक व्यक्ति की जान ले रहे हैं या ए क अनुमान है जो दर्शाता है कि 4,434 मीट्रिक टन कार्बन डाइऑक्साइड सदी के अंत तक एक व्यक्ति की मृत्यु के लिए जिम्मेवार होगा। वहीं यदि नाइजीरिया की बात करें तो वहां के करीब 146.2 नागरिक मिलकर अपने जीवन भर में इतना उत्सर्जन करते हैं। वैश्विक आधार पर देखें तो औसतन 12.8 व्यक्ति अपने जीवन भर में इतना उत्सर्जन करते हैं। वहीं यूनाइटेड किंगडम के लिए यह आंकड़ा 9.4 और ब्राजील के लिए 25.8 है।

यह सीधे तौर पर दर्शाता है कि विकासशील देशों की तुलना में विकसित देशों द्वारा कहीं ज्यादा उत्सर्जन किया जा रहा है, जिसका जलवायु पर उतना ज्यादा प्रभाव पड़ रहा है। यदि इसे दूसरी तरह समझें तो 2020 के बेसलाइन उत्सर्जन में 10 लाख मीट्रिक टन की वृद्धि से करीब 226 लोग मारे जाएंगे, जोकि 216,000 यात्री वाहनों द्वारा किए जा रहे उत्सर्जन के बराबर है। यह उतना उत्सर्जन है जितना 115,000 घर या 35 वाणिज्यिक एयरलाइन एक वर्ष में उत्सर्जित करते हैं। यही नहीं अनुमान है कि अमेरिका में एक थर्मल पावर प्लांट हर साल औसतन इतना कार्बनडाइऑक्साइड उत्सर्जित करता है, जो 904 लोगों की मृत्यु का कारण बन सकता है।

शोध के अनुसार यदि जिस रफ़्तार से उत्सर्जन हो रहा है वैसा ही चलता रहा तो 2050 तक वैश्विक औसत तापमान में 2.1 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो जाएगी। यह वह सीमा है जिसे पैरिस समझौते के तहत तापमान में हो रही वृद्धि को सीमित करने के लिए निर्धारित किया गया है। इसके बाद जलवायु परिवर्तन के परिणाम समय के साथ बद से बदतर होते जाएंगे। इस लिहाज से सदी के अंत तक तापमान 4.1 डिग्री सेल्सियस बढ़ जाएगा।

इस वृद्धि के चलते सदी के अंत तक करीब 8.3 करोड़ अतिरिक्त लोगों की जान जाएगी। अनुमान है की इनमें से ज्यादातर मौतें अफ्रीका, मध्य पूर्व और दक्षिण एशिया के देशों में होंगी जो पहले से ही गरीबी और बढ़ते तापमान का कहर झेल रहे हैं। हालांकि इस शोध से जुड़े शोधकर्ताओं के अनुसार यह कार्बन उत्सर्जन के कारण होने वाली मौतों का सही आंकड़ा नहीं है क्योंकि यह सिर्फ तापमान में हो रही वृद्धि से जुड़ी मौतों को दर्शाता है। इसमें वायु प्रदूषण, बाढ़ आदि से होने वाली मौतों को शामिल नहीं किया गया है। प्रमुख शोधकर्ता ब्रेसलर की मानें तो डाइस मॉडल के अनुसार 2020 में हर एक मीट्रिक टन कार्बन डाइऑक्साइड की सामाजिक लागत करीब 37 डॉलर या 2,753 रुपए है। लेकिन यदि इसमें मृत्युदर में होने वाली वृद्धि को भी जोड़ दिया जाए तो यह लागत बढ़कर 19,197 रुपए (258 डॉलर) प्रति टन पर पहुंच जाएगी। गौरतलब है कि कार्बन की सामाजिक, या वित्तीय लागत की गणना अर्थशास्त्री विलियम नॉर्डहॉस ने सबसे पहले की थी। जो बाद में व्यापक रूप से उपयोग की जाने वाली मीट्रिक बन गई है। यह माप बदलती जलवायु के अनुकूलन के साथ एक टन कार्बन उत्सर्जन से होने वाले नुकसान की गणना करती है। इसका मतलब है कि हमें उत्सर्जन में बड़े पैमाने पर कटौती करने की जरुरत है, जिससे 2050 तक कार्बन उत्सर्जन को पूरी तरह रोका जाए। शोध के अनुसार यदि हम ऐसा कर पाने में सफल रहते हैं तो सदी के अंत तक तापमान में हो रही वृद्धि को 2.4 डिग्री सेल्सियस पर रोक पाने में सफल रहेंगें, जिससे करीब 7.4 करोड़ लोगों की जान बचाई जा सकेगी।

ग्रीन रिवोल्ट
हरित-नीरा रहे वसुंधरा

लाचारी भी लापरवाही भी

पिछले कई दिनों की बारिश के बाद हिमालयी राज्यों में जहां पहाड़ों के टूटने , भूस्खलन की घटनाओं में बढ़ोतरी हुयी है वहीं देश भर में शहर के शहर भारी बारिश के बाद जलमग्न हो रहे हैं। नालों और शहरों के गड्ढों में दुर्घटनायें हो रही हैं। झारखंड की राजधानी रांची के कई ऐसे इलाकों के डूबने की तस्वीरें सामने आयी जहां घनी रिहायशी आबादी है साथ ही बड़े बड़े अपार्टमेंट बने हुये हैं। ये शहर के मुख्य इलाके हैं। यहां नीचला तल्ला पानी से भर गया और गाड़ियां पूरी तरह से डूब गयीं।

प्रकृति की ताकत के सामने हम मनुष्य कुछ भी नहीं। भले हम बड़ी और विशाल परियोजनाओं से नदी की धारा को रोक दें, उसका रूख मोड़ कर इस मुगालते में रहें कि हमने प्रकृति पर विजय पा ली है, पर हमारी ये सारी करतूतें एक झटके में बौनी पड़ जाती हैं जब प्रकृति अपना रौद्र रूप दिखाती है।

तूफान, बादल फटने, पहाड़ों के धंसने टूटने पर हमारे विशाल बांध, सड़कें पुल और निर्माण एक झटके में ध्वस्त होकर नमींदोज हो जाते हैं। हम प्रकृति के सामने लाचार तो हैं पर उसके साथ खिलवाड़ कर के लापरवाह भी हैं और उसी का नतीजा भूस्खलन, गावों , सड़कों का जमींदोज होना, लोगों की मौत है।

नालों और नदियों को पार करते समय लोग डूब गये, दुर्घटना का शिकार हो गये। पिछले साल का वाकया याद किजिये जब शहर में एक नाले को पार करते वक्त एक बाइक सवार युवक तेज बहाव में डूब गया और लाख प्रयासों के बाद भी उसका शव नहीं मिला। विडंबना ये कि आज भी वादे और आश्वासन के बाद उस नाले पर कोई सुरक्षित पुल नहीं बना है। ये सभी घटनायें बहुत हृदय विदारक हैं, पर इसके पीछे मूल कारण भी हम स्वयं हैं। इन बरसाती नदियों, नालों के ऊपर अवैध मकान और बस्तियों का बनना और अवैध निर्माण के होते समय प्रसाशन और सरकार का आंखें मूंदे रहना एक अक्षम्य अपराध है। अब प्रकृति और मॉनसून जब अपने नियमित कार्य पर है तो हम जान माल के नुकसान का रोना रो रहे हैं।

बढती आबादी और जरूरतों के अनुसार निर्माण तो होंगे, साथ ही शहर का फैलाव भी होगा, पर इस दरम्यान हमें प्रकृति के साथ खिलवाड़ और लापरवाही से बचना ही होगा। यूरोप जैसे देशों में बड़े भव्य नगरों से होकर भी नदियां स्वच्छ अविरल बहती हैं उन्हें कोई छेड़ता नहीं, पर भारत में ऐसा नहीं है हम नदियों, पहाड़ों को पूजते भी हैं और उसे रोकते , अतिक्रमित करते और प्रदूषित भी करते हैं। नतीजा भयंकर प्राकृतिक आपदा के रूप में भोगते हैं।

देश में दलदली भूमि का संरक्षण है जरूरी

देश भर में वेटलैंड के क्षेत्र दशकों से उपेक्षा के शिकार रहे हैं। वेटलैंड से तात्पर्य आद्रभूमि या दलदली भूमि से है जो बाढ़ से बचाव, भूजल संग्रहण इत्यादि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

रितेश कुमार, गोपीकृष्ण वारियर

कुछ चुनिंदा बड़े वेटलैंड को छोड़ दिया जाए जो रामसर सम्मेलन के तहत अंतरराष्ट्रीय महत्व के बताए गए हैं तो अधिकतर वेटलैंड या तो शहरों के कूड़ेदान के तौर पर इस्तेमाल किये जा रहे हैं या फिर उनका अतिक्रमण कर लिया गया है। कृषि या मकान इत्यादि बनाने के वास्ते। हालांकि यह भी कहना सही नहीं है कि सबकुछ निराशाजनक ही है। देश के कई हिस्सों में लोगों ने इन वेटलैण्ड्स को बचाने की जिम्मेदारी उठा ली है। ये लोग और इनका समुदाय अपने आस-पास के पोखर, तालाब और अन्य ऐसे क्षेत्र का बखूबी संरक्षण कर रहे हैं।

वर्ष 1940 में दूसरा विश्व युद्ध खत्म होते ही विज्ञान को एक महत्वपूर्ण सफलता हासिल मिली। हुआ यह कि सदियों से चली आ रही जानलेवा बीमारी के खिलाफ जंग में मानव जीवन को एक मजबूत हथियार मिला। इस बीमारी का नाम है मलेरिया और यह नया हथियार था -औद्योगिक रूप से क्लोरोक्वीन दवाई का निर्माण करना। इसके साथ ही, डीडीटी का छिड़काव भी इस बीमारी के लिए मजबूत हथियार बना। इससे पहले मलेरिया की दवाई, एक सिनकोना नामक पेड़ की छाल से कुनैन निकालकर बनाई जाती थी। इस वजह से इसकी उत्पादन और वितरण क्षमता काफी सीमित थी। विज्ञान के क्षेत्र में इस विकास का पर्यावरण को नुकसान भी हुआ। जिन इलाकों में मलेरिया के डर से लोग नहीं बसते थे, अचानक वहां भी लोग रहने लगे। इसमें ऐसी जगहें भी शामिल थीं जो जलस्रोतों और सूखी जमीन के मध्य में स्थित है जहां सालों-भर या कुछ महीने पानी जमा होता है। इसे आद्रभूमि या दलदली भूमि कह सकते हैं। ऐसी जगह को ही अंग्रेजी में वेटलैंड कहते हैं। विश्व की कई भाषाओं में इनके लिए नकारात्मक शब्द ईजाद कर दिए गए थे। मलेरिया की दवा आने के बाद हजारों वर्ग किलोमीटर के जंगल को काटकर वहां लोगों के रहने और खेती करने का इंतजाम किया जाने लगा।

भारत में अंग्रेजी के शासन के दौरान विकसित भूमि प्रबंधन की व्यवस्था में इस वेटलैंड को 'वेस्टलैंड' की श्रेणी में रखा गया। इसके अनुसार भूमि के इस हिस्से को चरवाही या बसावट के लिए विकसित कर बेहतर इस्तेमाल किया जाना था। आजाद भारत में भी सरकार ने इस जल-निकासी के क्षेत्र के तौर पर देखा और इसके लिए कई प्रोजेक्ट बनाये। खेती और इंसानी बसावट का इन वेटलैंड में विस्तार होता रहा। आज भी कई राज्यों में इन क्षेत्रों से जल निकासी की जाती है। बीसवीं सदी के मध्य में वेटलैंड को अंतरराष्ट्रीय महत्व मिलना शुरू हुआ जब उन दिनों पक्षी-शिकार के शौकीन लोगों को लगने लगा कि उनके शिकार का दायरा कम होता जा रहा है। वैश्विक प्रयासों की वजह से 1971 रामसर सम्मेलन का आयोजन हुआ। इस साल 2021 में ईरान के रामसर शहर में आयोजित उस अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन को पचास साल पूरे हो रहे हैं। उस संधि को रामसर समझौता कहते हैं।

भारत उन 17 देशों में शामिल था जो उस समझौते के लिए तैयार हुए। हालांकि उस समझौते पर हस्ताक्षर 1982 में हुआ। पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के कार्यकाल में। वर्ष 1985 में जब पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय अस्तित्व में आया तब नेशनल वेट्लैन्ड कंजर्वेशन प्रोग्राम इसके कुछ शुरुआती योजना में शामिल रहा। इससे उन राज्यों को जो वेटलैंड संरक्षण में दिलचस्पी रखते थे, उन्हें इसके लिए केंद्र से फंड लेने सहूलियत होती थी। इन सब कवायद के बाद भी देश के तमाम वेटलैंड उपेक्षा के शिकार होते रहे। इन कोशिशों में उन्ही वेटलैंड का संरक्षण किया जाता रहा जो रामसर संधि के दायरे में थे।

इन वेटलैंड में बढ़ते कूड़े के ढेर या नाले के निकासी के तहत समाज और वेटलैंड के बीच बढ़ती खाई आसानी से देखा भी जा सकता है। सरकार की बेमन से की जा रही कोशिश, वेटलैंड की बिगड़ती स्थिति के मुकाबले नगण्य साबित हो रहा है। जैसे ऊंट के मुंह में जीरा। भारत में वेटलैंड्स की घोर उपेक्षा तब और स्पष्ट होता है जब पता चलता है कि देश में मौजूद कुल 7,70,000 वेटलैंड्स में से 5,50,000 छोटे तालाब या जलस्रोत के रूप में गांव या शहरों में स्थित हैं।हालांकि, रामसर स्थलों का संरक्षण हुआ, लेकिन छोटे वेटलैंड्स जो कि गांवों में या किसी निजी जमीन पर स्थित थे, उनकी अवहेलना हुई।

ऐसा नहीं है कि वेटलैंड्स के लिए हर दिशा से बुरी खबर ही आ रही है। देश के विभिन्न हिस्सों में जागरूक लोग और समुदाय ने आगे आकर इसके संरक्षण की कोशिशें की हैं और इन जल स्रोतों को पुनर्जीवन दिया है। वेटलैंड इंटरनेशनल, दक्षिण एशिया के वेटलैंड चैंपियन्स सीरीज ने देशभर के ऐसे 25 सफल प्रयासों की पहचान की। जैसे कलमाने कामेगौड़ा नामक चरवाहे ने कर्नाटक के मांड्या जिले में तालाब खोदे और पुराने तालाबों का जीर्णोद्धार किया।

सत्तर वर्षीय किसान कोचू मुहम्मद ने केरला के कोले वेटलैंड को बचाने में अहम भूमिका निभाई।

चंबल नदी के किनारे बसे चैतपुर गांव में किसान से चौकीदार बने जगदीश ने इंडियन स्किमर पक्षी के अंडों को बचाने के लिए वेटलैंड बचाया।

तमिलनाडु के पुलिकट लेक की कछार पर रहने वाली मीरासा का गांव पुनः विस्थापन का खतरा झेल रहा है, कट्टुपल्ली का औद्योगिक इलाका बढ़कर गांव की सीमा में आ गया है। बावजूद इस खतरे के वे मैंग्रोव का जंगल बचाने में लगी हुई हैं।

बिजय कुमार काबी अपने समुदाय को साथ लेकर ओडिशा के बाड़ाकोट में मैंग्रोव बचाने की मुहिम चला रहे हैं।

अपने आसपास के प्राकृतिक संसाधनों के प्रति गहरी संवेदना रखने वाली महिलाओं ने संरक्षण में अग्रणी भूमिका निभाई है। ऐसी कई कहानियां इस सीरिज का हिस्सा बनीं। तमिलनाडु के वेल्लोर जिले में कनियाम्बदी ब्लॉक के 21 गांवों की हजारों महिलाओं ने नागमदी को बचाने के लिए चेकडैम और भूजल रिचार्ज करने वाले कुएं बनाए।

महाराष्ट्र के सिंधुदुर्ग जिले में श्वेता हुले के नेतृत्व में स्वामिनी स्व-सहायता समूह ने मैंग्रोव सफारी चलाकर इकोटूरिज्म के जरिए गांव में मैंग्रोव का संरक्षण किया। मध्य प्रदेश के बुंदेलखंड इलाके में जल सहेलियों ने इलाके के तालाब का जीर्णोद्धार किया।

ऐसी कोशिशें शहरी इलाको में भी हो रही हैं। पेशे से इंजीनियर रामवीर तंवर ने अपना काम छोड़कर नोएडा, ग्रेटर नोएडा और एनसीआर में तलाबों का संरक्षण कर रहे हैं।

रामवीर तंवर के प्रयास से नोएडा और ग्रेटर नोएडा में अब तक 20 से अधिक तालाबों का पुनरुद्धार किया जा चुका है।

रामवीर तंवर के प्रयास से नोएडा और ग्रेटर नोएडा में अब तक 20 से अधिक तालाबों का पुनरुद्धार किया जा चुका है।

इलस्ट्रेशन- स्वाति खरबंदा

नवी मुंबई के एक जोड़े सुनील और श्रुती अग्रवाल ने 80 हेक्टेयर में फैले वेटलैंड को बचाने की कोशिश कर रहे हैं, ताकि हर साल वहां फ्लैमिंगो आ सके। इस वेटलैंड पर प्रस्तावित रहवाली कॉलोनी और गोल्फ कोर्स की वजह से खतरा उत्पन्न हो गया है।

पुणे की मुथा नदी को बचाने और साफ सुथरा रखने के लिए जीवितनदी नामक एक समूह प्रयास कर रहा है।

बैंगलुरु के दक्षिणी हिस्से में स्थानीय मछुआरे और शहर के बाशिंदे जक्कुर लेक को साफ करने का प्रयास कर रहे हैं। शहर के दूसरे हिस्से में भी यह मुहिम पहुंच रही है।

वेटलैंड चैंपियन्स सीरीज की कहानियों ने इस मिथक को तोड़ा कि वेटलैंड का प्रबंधन तकनीकी रूप से जटिल काम है और इसमें गूढ़ विज्ञान, प्रबंधन की योजना और निवेश की आवश्यकता होती है। इन कहानियों से सामने आया कि एक साधारण सकारात्मक पहल से भी वेटलैंड का संरक्षण संभव हो जाता है।

भारतीय में आद्रभूमि या दलदली भूमि को **अनुपा** कहा गया है जिसका अर्थ होता है अतुलनीय। देश के कोने-कोने में स्थित विभिन्न समाज के लोग वेटलैंड्स का इस्तेमाल अपने तरीकों से करते रहे हैं। इसमें पारिस्थितिकी तंत्र का प्रबंधन से लेकर न्यायसंगत तरीके से इससे मिलने वाले संसाधनों का नियंत्रण और प्रयोग शामिल है। सरकारों ने समाज के इस संसाधन के प्रयोग और इसकी सीमा निर्धारण के लिए तमाम नियम लाद दिए हैं, जिससे समाज की भूमिका गौण होती चली गई।

छत्तीसगढ़ में धान से बायोफ्यूल बनाने की योजना

बायोफ्यूल बनाने के लिए पहले छत्तीसगढ़ में जेट्रोफा का उपयोग होना था, पर यह योजना कामयाब नहीं हो सकी। अब राज्य सरकार धान से बायोफ्यूल बनाने की योजना पर काम कर रही है। इसको लेकर राज्य ने नौ निजी और दो सरकारी कंपनियों के साथ करार किया है।

दीपान्विता गीता नियोगी

भारत सरकार के क्लीन एनर्जी यानी स्वच्छ ऊर्जा की योजना में बायोफ्यूल एक अहम हिस्सा है। विश्व में कच्चा तेल आयात करने के मामले में भारत का स्थान तीसरा है। अपनी घरेलू जरूरत पूरी करने के लिए भारत आयात पर निर्भर है। वर्ष 2018 में नेशनल पॉलिसी ऑन बायोफ्यूल्स के तहत 2030 तक जीवाश्म ईंधन में 20 फीसदी बायोफ्यूल मिलाने का लक्ष्य है। फिलहाल देश में 5 से 6 फीसदी बायोफ्यूल ही जीवाश्म ईंधन में मिलाया जाता है। हालांकि बीते जून में प्रधानमंत्री ने घोषणा की कि तेल कंपनियां 2023 के अप्रैल से ही 20 फीसदी एथानॉल के साथ पेट्रोल बेचना शुरू करेंगी।

छत्तीसगढ़ में खाने लायक धान को ईंधन में बदलने की जिस योजना पर काम हो रहा है उसपर कई सवाल भी खड़े हो रहे हैं। एक बड़ा सवाल खाद्य सुरक्षा का है। क्या इस योजना से देश की खाद्य सुरक्षा पर कोई असर होगा?बायोफ्लूयल को अगेव के पौधे से भी बनाया जाता है। इसे रामबांस के नाम से भी जाना जाता है। छत्तीसगढ़ का वन विभाग बस्तर क्षेत्र में इस पौधे की खेती को बढ़ावा दे रहा है। यहां इसका इस्तेमाल रस्सी और हस्तशिल्प बनाने में होता है।

छग सरकार का कहना है कि एफसीआई राज्य से धान की पूरी पैदावार नहीं लेती जिससे राज्य में धान बच जाता है। इस धान से बायोफ्यूल बनाया जा सकता है और इसी वजह से हमें इसकी अनुमति चाहिए। लेकिन केंद्र सरकार सिर्फ एफसीआई के धान से ही बायोफ्यूल बनाने की अनुमति देती है। बघेल कहते हैं कि बस्तर इलाका धान से बायोफ्यूल बनाने का संयंत्र लगाने के लिए मुफीद है। बायोफ्यूल का निर्माण किसी भी तरह के कार्बोहाइड्रेट वाले पदार्थ से किया जा सकता है और इसके लिए कच्चा माल की अबाध आपूर्ति सुनिश्चित करना जरूरी है। छत्तीसगढ़ बायोफ्यूल डेवलपमेंट ऑथोरिटी के सीईओ सुमित सरकार के मुताबिक छत्तीसगढ़ की नीति राष्ट्रीय बायोफ्यूल नीति 2018 से प्रभावित है जहां इस बात का जिक्र है कि अतिरिक्त खाद्यान्न उत्पादन से इथेनॉल का निर्माण किया जा सकता है। ''राज्य में हर साल धान की बंपर फसल होती है और यह आंकड़ा 6,00,000 मीट्रिक टन से एक करोड़ मीट्रिक टन को छूता है। बंपर उत्पादन के परिणामस्वरूप टनो धान राज्य के पास ही रह जाते हैं। इसी वजह से राज्य ने केंद्र सरकार से धान से बायोफ्यूल बनाने की अनुमति मांगी है। इस सिलसिले में कई बैठके हो चुकी हैं,'' सरकार का कहना है। छत्तीसगढ़ राज्य औद्योगिक विकास निगम (सीएसआईडीसी) के महाप्रबंधक ओपी बंजारे कहते हैं कि केंद्र सरकार ने एफसीआई के धान से बायोफ्यूल बनाने की अनुमति दी हुई है। लेकिन छत्तीसगढ़ सरकार ने राज्य के धान को भी इस काम में लाने की अनुमति मांगी है। प्रधानमंत्री ने इस साल पांच जून को इथेनॉल ब्लेंडिंग यानी जीवाश्म ईंधन में बायोफ्यूल मिलाने की नीति जारी की। इसके बाद इस अभियान में तेजी आई।

''इस काम के लिए संयंत्रों को कच्चा माल की आपूर्ति का दायरा बढ़ाना होगा। इसमें धान को भी शामिल किया जा सकता है। इसे देखते हुए राज्य ने केंद्र स अनुमति मांगी है। लेकिन केंद्र सरकार ने अभी तक हरी झंडी नहीं दी है,'' सरकार ने कहा।

सरकार ने समझाया कि मिल में धान से चावल निकालने के बाद इसे बायोफ्यूल बनाने के लिए भेजा जा सकता है। इसके भूसे से भी स्वच्छ ऊर्जा बनाया जा सकता है जिसका उपयोग बॉयलर और ऊर्जा उत्पादन में हो सकता है।

धान से बायोफ्यूल बनाने के लिए निवेशक हैं तैयार

सरकार के साथ सात निजी निवेशकों ने समझौता किया है जिसके तहत 100 किलोलीटर प्रतिदिन (केएलपीडी) उत्पादन की क्षमता से उत्पादन किया जा सकेगा। अनुमान के मुताबिक एक मीट्रिक टन धान से 45 लीटर बायोफ्यूल इथेनॉल के रूप में उत्पादित किया जा सकता है।

इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन धान से बायोफ्यूल बनाने के लिए 500 केएलपीडी क्षमता का संयंत्र स्थापित कर रही है। राज्य के निवेशकों में शामिल श्री बजरंग केमिकल डिस्टिलरी लिमिडेट के प्रेसिडेंट एसके गोयल ने बेमेतरा जिले में ऐसा संयंत्र लगाने के लिए राज्य सरकार से करार किया है।

रायपुर निवासी पूर्व सरकारी वैज्ञानिक और खाद बनाने वाली लैबोरेटरीज से जुड़े अशोक मिश्रा बताते हैं कि जेट्रोफा के फेल होने के पीछे वजह थी उसके भीतर बायोमास का कम होना। ''यह कोई फसल नहीं बल्कि बाड़ पर लगाने वाला पौधा बनकर रह गया। इसकी मात्रा इतनी कम थी कि प्रयोग सफल न हो सका। अभी भी जेट्रोफा का उपयोग इथेनॉल बनाने में किया जा सकता है। उन्होंने आगे कहा कि छत्तीसगढ़ में धान की उपलब्धता है इसलिए इस प्रयोग के सफल होने की पूरी संभावना है।

खाद्य नीति के विशेषज्ञ देविंदर शर्मा ने खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से मुद्दे की तरफ ध्यान दिलाया। वह कहते हैं कि सबसे बड़ी चिंता खाद्या सुरक्षा की होनी चाहिए। नीति निर्धारक धान से इथेनॉल बनाने की ओर सोच रहे हैं, इसका मतलब भूख खत्म करना अभी भी उनकी प्राथमिकता में नीचे है।''भारत अभी भी भूख की समस्या से जूझ रहा है। यहां विश्व में सबसे अधिक परिवार भूख के शिकार हैं। अगर हम तब भी खाद्यान्न से बायोफ्यूल बनाने का निर्णय लेते हैं तो यह किस तरह की विविधता होगी? यह नीतिगत स्तर पर सही निर्णय नहीं होगा।इन सारे प्रयासों के बीच यह बात भी हमें याद रखनी होगी कि बायोफ्यूल का कोई भी प्रयास अब तक ठोस रूप से धरातल पर भारत में नहीं उतर पाया है।

तेजी से पिघल रहे हैं एशिया के ऊंचे पहाड़ों पर मौजूद ग्लेशियर

हैरानी की बात यह है कि जिन क्षेत्रों में पहले ग्लेशियर बढ़ रहे थे, वहां भी अब ग्लेशियर पिघल रहे हैं

एशिया में जिस तरह गर्मियों के दौरान तापमान बढ़ रहा है, उसका असर ऊंचे पहाड़ों पर मौजूद ग्लेशियरों पर भी पड़ रहा है, और वो पहले के मुकाबले कहीं तेजी से से पिघल रहे हैं। यह जानकारी सेंट एंड्रयूज विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं द्वारा किए एक अध्ययन में सामने आई है। हैरानी की बात यह है कि जिन क्षेत्रों में पहले ग्लेशियर बढ़ रहे थे वहां भी अब ग्लेशियर पिघल रहे हैं।इसे समझने के लिए शोधकर्ताओं ने 1960 के दशक में यूएस कोरोना जासूसी उपग्रह और 1970 के दशक में हेक्सागोन जासूसी उपग्रह के साथ-साथ कई आधुनिक उपग्रहों से प्राप्त चित्रों का उपयोग किया है। हिमनदविदों ने एशिया के ऊंचे पर्वतीय क्षेत्रों में विभिन्न ग्लेशियरों की जांच की है। इसमें हिमालय से लेकर कई अन्य प्रमुख पर्वत श्रृंखलाएं जैसे पामीर, टीएन शान और तिब्बत के पहाड़ शामिल हैं।शोधकर्ताओं के अनुसार ग्लेशियरों का व्यवहार यह स्पष्ट करता है कि उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में स्पष्ट रूप से जलवायु परिवर्तन अपना असर दिखा रहा है। गौरतलब है कि ग्लेशियरों के यह ऊंचे पर्वतीय क्षेत्र एशिया की कुछ सबसे बड़ी नदियों के स्रोत हैं, जिन पर करोड़ों लोग अपनी बुनियादी जरूरतों के लिए निर्भर हैं। जर्नल नेचर कम्युनिकेशंस में छपे इस शोध के निष्कर्ष दिखाते हैं, कि भविष्य में इस क्षेत्र में काफी हद तक बर्फ पिघल सकती है।

सीओ2 सोखने में अहम भूमिका निभा सकती हैं चट्टानें

अध्ययन में पाया गया कि चट्टानों का पाउडर हर साल 2.5 गीगाटन तक सीओ2 हटा सकता है।

वातावरण में बढ़ती ग्रीनहाउस गैसों को हटाने के लिए दुनिया भर में अलग-अलग तरह के विकल्पों की खोज की जा रही है। वहीं अब इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट फॉर एप्लाइड सिस्टम एनालिसिस (आईआईएसए) के शोधकर्ताओं और उनके अंतर्राष्ट्रीय सहयोगियों ने चट्टान के कार्बन सोखने की क्षमता का पता लगाया है। नए अध्ययन में, जलवायु और पर्यावरण विज्ञान प्रयोगशाला (एलएससीई) की अगुवाई में एक अंतरराष्ट्रीय शोध दल और आईआईएएसए के शोधकर्ताओं ने जमीन की बारीक सिलिकेट चट्टान (रॉक) के पाउडर के उपयोग के बारे में पता लगाया। पहले कभी भी सीओ2 हटाने के लिए उपयोग चट्टानों के उपयोग पर शोध नहीं किया गया है। शोधकर्ताओं का मानना है कि चट्टान के पाउडर को बड़े पैमाने पर तेजी से कार्बन हटाने के रूप में उपयोग किया जा सकता है। क्योंकि इसे मौजूदा भूमि प्रणालियों में आसानी से लागू किया जा सकता है।

इस उत्सर्जन को रोकने वाली तकनीक के पीछे का सिद्धांत पृथ्वी की सतह पर चट्टानों और खनिजों के साथ सीओ2 की प्राकृतिक प्रतिक्रिया को बढ़ाना है क्योंकि वे आबोहवा के कारण नष्ट हो जाते हैं या प्राकृतिक प्रक्रिया के माध्यम से टूट कर घुल जाते हैं। इस प्रक्रिया में सिलिकेट खनिजों को पाउडर के रूप में पीसना और इसे भूमि की सतह पर फैलाना शामिल है, जहां यह सीओ2 के साथ प्रतिक्रिया करता है और इसे वायुमंडल से हटा देता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया जिसे अजैविक कार्बन डाइऑक्साइड हटाने के विकल्प के रूप में जाना जाता है। संभावित चीजों में, बेसाल्ट भी है, क्योंकि यह न केवल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है जिसमें हर तरह के मौसम के प्रभावों को सहने की क्षमता भी है, इसमें पौधों के लिए पोषक तत्व भी शामिल हैं जो दूसरे जैविक सीओ2 हटाने के लिए एक बहुत अच्छा रास्ता है। इसे अब पहली बार प्रमाणित किया गया है।अध्ययन में विशेष रूप से इस पहले अनदेखे जैविक सीओ2 हटाने के मार्ग का पता लगाया। यह अध्ययन नेचर जियोसाइंस में प्रकाशित हुआ है।

उत्तरी हिंद महासागर मेबढ़ रही है चक्रवाती तूफानों की तीव्रता

एजेंसियां

भारतीय वैज्ञानिकों की एक टीम ने जलवायु परिवर्तन कार्यक्रम (सीसीपी) के तहत भारत सरकार के विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग की सहायता से यह अध्ययन किया है। इसके अंतर्गत उत्तरी हिंद महासागर में उष्णकटिबंधीय चक्रवातों की गतिविधि पर पड़ने वाले पर्यावरणीय प्रभाव और अल नीनो-दक्षिणी दोलन (ईएनएसओ) में महत्वपूर्ण वायुमंडलीय मापदंडों की भूमिका और प्रभाव का अध्ययन किया गया है।

अध्ययन में पाया गया कि उष्णकटिबंधीय चक्रवातों की विनाशकारी क्षमता जिसे पावर डिसिपेशन इंडेक्स कहा जाता है के बीच गहन संबंध है। विशेष रूप से मानसून के मौसम से पहले बनने वाले उष्णकटिबंधीय चक्रवातों में बढ़ोतरी देखी गई है। हाल के दशक 2000 के बाद बंगाल की खाड़ी और अरब सागर की घाटियों दोनों जगह इनकी संख्या काफी बढ़ी हुई पाई गई

गिद्ध संरक्षण में अहम भूमिका निभा रहा महाराष्ट्र का चिरगांव

स्नेहा महाले

महाराष्ट्र के एक गांव चिरगांव के लोग गिद्धों का संरक्षण कर रहे हैं। ग्रामीणों के प्रयास से गांव में गिद्ध की आबादी 1999-2000 में 22 गिद्धों से बढ़कर इस साल 249 हो गई है।वर्ष 1980 में भारत में चार करोड़ गिद्धों का बसेरा था। साल 2017 में इनकी संख्या घटकर मात्र 19000 हो गयी।भारत में 2019 से राष्ट्रीय गिद्ध संरक्षण कार्यक्रम भी चलाया जाता है जिसके तहत 2020-25 के दौरान गिद्धों की घटती आबादी पर पूर्ण विराम लगाकर इनकी संख्या में वृद्धि करनी है।

1980 के दशक में भारत में चार करोड़ गिद्ध हुआ करते थे जिसमें तीन प्रजातियों- व्हाइट बैक्ड, लॉन्ग बिल्ड और स्लेंडर बिल्ड- के गिद्ध प्रमुख थे। वर्ष 2017 आते-आते गिद्धों की संख्या में तेज गिरावट दर्ज की गयी और पता चला कि अब महज 19,000 गिद्ध बच गए हैं।कुछ प्रजातियों की संख्या में तो 90 फीसदी तक की गिरावट देखी गई। स्थिति को समझते हुए भारत सरकार ने वर्ष 2019 में गिद्धों के संरक्षण के लिए एक कार्यक्रम बनाया जिसके तहत वर्ष 2020 से 2025 के बीच न केवल गिद्धों की गिरती आबादी को रोकना था, बल्कि इसमें इजाफा भी करना था।

भारत में नौ प्रजाति के गिद्ध देखे जा सकते हैं- व्हाइट बैक्ड, लॉन्ग बिल्ड, स्लेंडर बिल्ड, हिमालयन, रेड हेडेड, इजिप्शियन, बियर्डेड, सिनेरियस और यूरेशियन ग्रिफॉन। भोजन और रहने लायक स्थान की कमी की वजह के साथ गिद्धों की संख्या घटने के पीछे जानवरों के शरीर में मिलने वाला डायक्लोफेनिक नामक दवाई भी बड़ी वजह रही। मृत जानवरों के शरीर में मौजूद दर्द निवारक यह दवाई गिद्धों के लिए जहर समान है। मात्र 0.4-0.7 प्रतिशत मृत जीवों में डायक्लोफेनिक पाया जाता है, लेकिन यह दवाई 99 फीसदी गिद्धों की आबादी कम होने के पीछे जिम्मेदार है।

कैसे किया चिरगांव ने कमाल?

पूरे देश की तरह ही चिरगांव में भी गिद्ध दिखने बंद हो गए थे। इलाके में मात्र 22 गिद्ध ही बचे थे जो कि मुख्यतः दो प्रजाति व्हाइट रम्प्ड और लॉन्ग बिल्ड से थे। सीसकैप के मेस्त्री ने गिद्धों की संख्या में गिरावट का पता लगाया। उन्होंने पाया कि गिद्धों के घोसले वाले पेड़ों को काट दिया गया है। इन पेड़ों के अभाव में गिद्धों का रहना मुश्किल था। गिद्ध कुदरती रूप से प्रकृति के सफाईकर्मी हैं, लेकिन मृत जानवरों के न मिलने से उन्हें भोजन की कमी भी होने लगी थी। क्योंकि राज्य सरकार ने मृत जानवरों को या तो जलाने या दफनाने की नीति अपना ली थी। इस नीति का असर भी गिद्धों की गिरती संख्या पर हुआ। आबादी घटने की दूसरी वजह बताते हुए कामथ ने कहा कि गिद्ध एक साल में एक ही चूजे को जन्म देते हैं। अगर वह चूजा मर जाए तो वह एक पीढ़ी खत्म ही हो जाती है। उन्होंने पाया कि इलाके में गिद्धों के मरने के पीछे डायक्लोफेनिक दवाई की कोई भूमिका नहीं है। समस्या का पता चलने के बाद सीसकैप के कार्यकर्ताओं ने गांव का सर्वेक्षण किया और संरक्षण की जरूरत वाले इलाकों को चिन्हित किया। कार्यकर्ताओं ने ऐसे पांच हजार पेड़ चिन्हित किए जिनके संरक्षण की जरूरत थी। मेस्त्री कहते हैं।इस काम में स्थानीय लोगों को शामिल कर गिद्धों का घर बचाना शुरू किया। इनकी मदद से काम आसान हो गया।

गिद्धों के लिए जरूरी भोजन की व्यवस्था

गिद्ध मुख्यतः मृत जानवर खाते हैं। इसके लिए गांव के आसपास एक नेटवर्क बनाया गया। ''हमने लोगों से अपील की कि कोई मृत जानवर दिखे तो हमें उसकी सूचना दें। ग्रामीणों को मृत जानवर के बदले कुछ प्रोत्साहन राशि भी देने का प्रावधान किया गया। इस तरह हमें गिद्ध का खाना मिलने लगा,'' मेस्त्री कहते हैं। इसके साथ ही गिद्ध और उनके हमारे पारिस्थितिकी तंत्र में महत्व को लेकर गांव में जागरुकता भी फैलाई गई। लोग गिद्ध का महत्व जानकर इसकी रक्षा करने को आगे आए।ग्रामीणों को गिद्ध के स्वास्थ्य की निगरानी का गुर भी सिखाया गया। गिद्ध और चूजे की देखभाल करना भी वह सीख गए। ''अगर हमें लगता है कि गिद्ध के बच्चे को भरपूर खाना नहीं मिलता तो हम पास के बाजार से मांस खरीदकर गिद्ध के खाने वाले इलाके में भी छोड़ते हैं। हम चूजों को बचाकर अपने केंद्र में लाकर उनका ख्याल रखते हैं। एकबार 2 से ढ़ाई किलो वजन होने पर उसे दोबारा छोड़ दिया जाता है,'' मेस्त्री ने बताया।

इस काम में स्कूली बच्चों की मदद भी ली गई

ग्रामीणों और संरक्षणकर्ताओं के इन प्रयासों से 2019 में इस इलाके में गिद्ध की संख्या बढ़कर 347 हो गई। पक्षी प्रेमी यहां घूमने आने लगे। इस तरह चिरगांव पर्यटन का केंद्र भी बनता गया। इतना ही नहीं आसपास के गांव वालों न प्रेरणा लेकर अपने इलाके में संरक्षण के प्रयास शुरू कर दिए।

मेस्त्री ने बताया कि संरक्षण के प्रयासों को चक्रवाती तूफान निसर्ग से भी झटका लगा जब 2019 में महाराष्ट्र के तटवर्ती इलाकों में तूफान ने कहर बरपाया था। इसके बाद आए कोविड-19 महामारी से भी संरक्षण के काम में चुनौती पेश आई। कोविड-19 के दौरान घर से न निकलने की वजह से सूचना तंत्र प्रभावित हुआ और गिद्धों के रहने और खाने की व्यवस्था करने में मुश्किलें आई। इन मुश्किलों के बावजूद चिरगांव में संरक्षण के प्रयास लगातार जारी हैं।

टोक्यो ओलंपिक की सस्टेनिबिलिटी ऑडिटिंग रिपोर्ट पर सवाल

जापान ओलंपिक समिति ने आईओसी की निगरानी में तमाम प्रकार के पर्यावरणीय नुकसान को बचाने और शहरी विरासत को नुकसान पहुंचाए बिना इंफ्रास्ट्रक्चर तैयार करने की बात कही थी

एजेंसियां : टोक्यो ओलंपिक के खत्म होने के बाद आने वाली सस्टेनिबिलिटी (सतत विकास) ऑडिटिंग रिपोर्ट पर दुनियाभर के पर्यावरणविदों की नजर है। हालांकि दुनियाभर के अधिकांश पर्यावरणविद मानते हैं कि टोक्यो ओलंपिक खेलों के लिए अंतर्राष्ट्रीय ओलंपिक समिति (आईओसी) द्वारा बनाए गए सस्टेनिबिलिटी मानकों को कड़ाई से लागू नहीं किया गया है। ऐसे में खेलों के बाद आने वाली जापान ओलंपिक समिति की सस्टेनिबिलिटी ऑडिटिंग रिपोर्ट पर सवाल उठना लाजिमी है। क्योंकि इस ओलंपिक खेलों के दौरान आईओसी ने नया एजेंडा-21 लागू किया है। वहीं दूसरी ओर आईओसी का दावा है कि सस्टेनिबिलिटी के मानक टोक्योवासियों के विरोध को ध्यान में रखते हुए कड़ाई से लागू किए गए हैं। यही कारण है कि खेलों के समापन के बाद जापान ओलंपिक समिति की सस्टेनिबिलिटी ऑडिटिंग रिपोर्ट पर आईओसी की भी नजर है।

कहने के लिए तो यह आईओसी के हाथ को और मजबूत करने के लिए बनाया गया है, लेकिन यहां ध्यान देना होगा कि इस एजेंडा में खेल के लिए बोली लगाने वाले शहरों के अपने ढांचागत निर्माण प्रक्रिया पर कम से कम खर्च करने और विकास प्रक्रिया के दौरान तमाम सस्टेनिबिलिटी मानक लागू किए गए हैं या नहीं, इसकी जिम्मेदारी आईओसी पर है। अब सवाल है कि क्या एजेंडा -21 के मानकों को आईओसी, जापान ओलंपिक समिति से अक्षशः पालन करवाने में सफल रहा का नहीं? क्योंकि टोक्यो में हो रहे ओलंपिक खेलों का कोरोना के कारण तो विरोध हो ही रहा था लेकिन इसके अलावा भी इस ओलंपिक आयोजन का इस बात के लिए विरोध किया जा रहा था कि शहर में खेलों के लिए बन रहे इंफ्रास्ट्रक्चर के कारण प्रदूषण में तेजी और शहरी विरासत को लगातार नुकसान पहुंचा है।

हर साल नौ लाख लोगों की मौत पेंट, कीटनाशक और कोयला से

अनुमान है कि एंथ्रोपोजेनिक सेकेंडरी ऑर्गेनिक एरोसोल के कारण उत्पन्न हो रहा वायु प्रदूषण हर साल 9 लाख लोगों की असमय जान ले रहा है

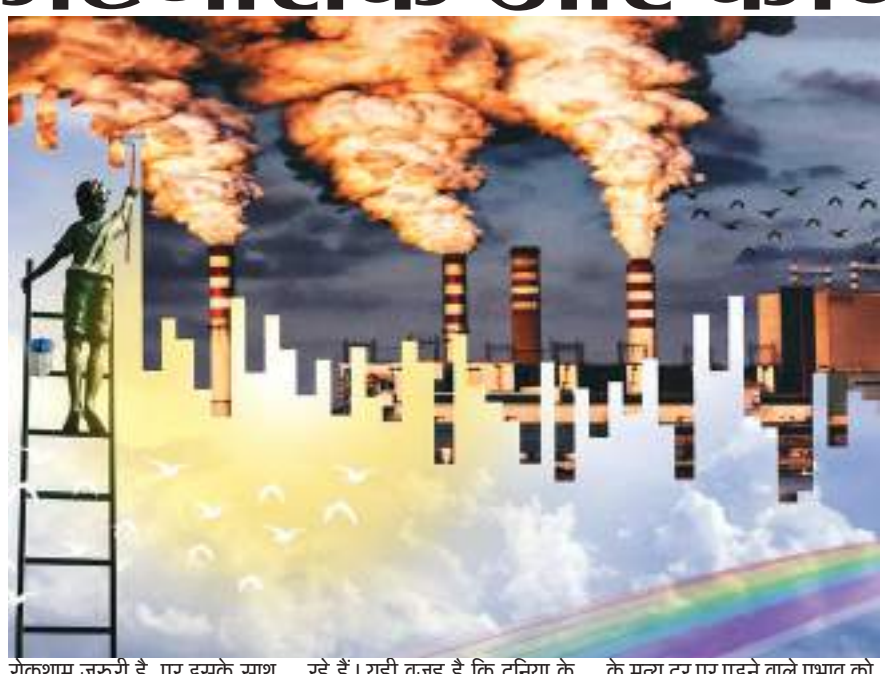

हमारी रोजमर्रा की जरुरतों को पूरा करने के लिए इस्तेमाल होने वाले उत्पादों जैसे पेंट, कीटनाशकों, कोयला आदि के कारण होने वाला वायु प्रदूषण हर साल दुनिया भर में लाखों लोगों की जान ले रहा है। यह जानकारी हाल ही में यूनिवर्सिटी ऑफ कोलोराडो बोल्डर द्वारा किए एक शोध में सामने आई है, जोकि जर्नल एटमॉस्फेरिक केमिस्ट्री एंड फिजिक्स में प्रकाशित हुआ है।

शोधकर्ताओं का अनुमान है कि इन एंथ्रोपोजेनिक सेकेंडरी ऑर्गेनिक एरोसोल के कारण उत्पन्न हो रहा वायु प्रदूषण हर साल 9 लाख तक लोगों की असमय जान ले रहा है। गौरतलब है कि यह एंथ्रोपोजेनिक सेकेंडरी ऑर्गेनिक एरोसोल, वातावरण में मौजूद वो छोटे कण होते हैं जो मानव गतिविधियों द्वारा उत्सर्जित रसायनों से बनते हैं इस शोध से जुड़े शोधकर्ता बेंजामिन नॉल्ट ने जानकारी दी है कि इन रोजमर्रा में इस्तेमाल होने वाले केमिकल्स और फ्यूल्स से पैदा होने वाला वायु प्रदूषण पहले के अनुमान के मुकाबले 10 गुना ज्यादा लोगों की जान ले सकता है।

नॉल्ट ने आगे बताया कि पहले लोगों का विचार था कि वायु प्रदूषण के कारण होने वाली असमय मौतों की दर को कम करने के लिए कोयला आधारित बिजली संयंत्रों और वाहनों से होने वाले प्रदूषण पर ध्यान देना चाहिए। उनके अनुसार यह सही है कि इनसे होने वाले प्रदूषण की रोकथाम जरुरी है, पर इसके साथ ही साफ-सफाई, पेंटिंग और अन्य रोजमर्रा के कामों में इस्तेमाल होने वाले केमिकल्स पर भी ध्यान देना जरुरी है। यदि आप ऐसा नहीं करते तो इसका मतलब है कि आप इसके एक प्रमुख स्रोत पर नहीं पहुंच रहे हैं।

यह काफी पहले से ही ज्ञात है कि वातावरण में मौजूद प्रदूषकों के सूक्ष्म कण इतने छोटे हैं कि वो सांस के साथ लोगों के फेफड़ों में जाकर उसे नुकसान पहुंचा सकते हैं, जिससे मृत्युदर में इजाफा हो सकता है। अनुमान है कि सूक्ष्म प्रदूषण कण जिन्हें अक्सर पीएम 2.5 के नाम से जाना जाता है वो हर साल करीब 30 से 40 लाख या उससे भी ज्यादा लोगों की जान ले रहे हैं। यही वजह है कि दुनिया के कई देशों में इन सूक्ष्म कणों को रोकने के लिए कानून बनाए गए हैं। हम बिजली संयंत्रों और जीवाश्म ईंधन जैसे डीजल आदि से निकलने वाली कालिख को नियंत्रित करते हैं। यह कण प्रदूषण के प्रत्यक्ष स्रोत हैं। साथ ही हमने नाइट्रोजन और सल्फर जैसे प्रदूषकों को रोकने के लिए भी नियम बनाए हैं, जो वातावरण में प्रतिक्रिया करके सूक्ष्म कण बनाते हैं। जो अप्रत्यक्ष रूप से प्रदूषण का कारण बनते हैं। लेकिन इस नए शोध में केमिकल्स के एक तीसरे वर्ग एंथ्रोपोजेनिक सेकेंडरी ऑर्गेनिक एरोसोल का अध्ययन किया है, जो प्रदूषण के इन महीन कणों का एक महत्वपूर्ण अप्रत्यक्ष स्रोत हैं। सूक्ष्म कणों के कई स्रोतों के मृत्यु दर पर पड़ने वाले प्रभाव को समझने के लिए शोधकर्ताओं ने पिछले दो दशकों में दुनिया भर के शहरों में किए 11 अध्ययनों और उनके आंकड़ों का विश्लेषण किया है। इसमें बीजिंग, लंदन और न्यूयॉर्क जैसे शहर शामिल थे। उन्होंने इन शहरों में केमिकल्स से हो रहे उत्सर्जन का एक व्यापक डेटाबेस बनाया है, जिसका वायु गुणवत्ता मॉडल की मदद से अध्ययन किया गया है जिसमें उपग्रह से प्राप्त आंकड़ों का भी अध्ययन किया गया है। उन्हें पता चला है कि इन 11 शहरों में मौजूद सेकेंडरी आर्गेनिक एयरोसोल का सम्बन्ध लोगों के रोजमर्रा के इस्तेमालवाले केमिकल्स के कारण उत्सर्जित होने वाले विशिष्ट कार्बनिक यौगिकों से था।

उत्सर्जन के इन स्रोतों में वाहनों के टेलपाइप, खाना बनाने के ईंधन जैसे लकड़ी और कोयला के साथ औद्योगिक सॉल्वैंट्स, हाउस पेंट, सफाई उत्पादों और अन्य केमिकल्स की भूमिका भी सामने आई थी। इससे पहले लॉस एंजिल्स में किए एक शोध में शोधकर्ताओं को पता चला था कि यह रासायनिक उत्पाद उतना ही योगदान करते हैं, जितना कि वाहनों से होने वाला वायु प्रदूषण होता है।

एनओएए वैज्ञानिक और इस शोध से जुड़े शोधकर्ता ब्रायन मैकडोनाल्ड ने बताया कि इस नए शोध से पता चला है कि यह उत्तरी अमेरिका, यूरोप और पूर्वी एशिया के शहरों की समस्या है। सीयू बोल्डर और इस शोध से जुड़े जोस-लुइस जिमेनेज ने बताया कि वायु गुणवत्ता से जुड़े नियमों में आमतौर पर वाष्पित होने वाले उन केमिकल्स पर ध्यान दिया जाता है जो ओजोन उत्सर्जित करते हैं, जोकि एक खतरनाक वायु प्रदूषक है। लेकिन हाल ही में किए इस शोध से पता चला है कि वो केमिकल्स जो ओजोन निर्माण में बहुत कम योगदान देते हैं वो भी हानिकारक महीन कणों के निर्माण में योगदान दे सकते हैं।

उनके अनुसार इसके प्रभाव को बहुत कम करके आंका गया है यही वजह है कि इसके नियंत्रण पर कभी ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया। लेकिन जब आप एटमोस्फेरिक केमिस्ट्री को ध्यान में रखते हैं और इसे मॉडल में डालते है तो पता चलता है कि यह बहुत लोगों की जान ले रहा है। ऐसे में इसपर भी ध्यान देना जरुरी हो जाता है। **डीटीई**

पेज एक का शेष ..

झारखंड में गन्ना और जैविक खेती .....

क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्रों और अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजनाओं को मिलकर करना चाहिए. उत्पादित बीजों का सामयिक विपणन के लिए भी प्रयास करना चाहिए. किसानों को महसूस होना चाहिए कि ऐसा बीज कहीं नहीं मिलेगा और विश्वविद्यालय द्वारा उत्पादित बीज हॉट केक की तरह तुरंत बिक जाएं. मौके पर डॉ ऋषि पाल सिंह, डायरेक्टर सीड एंड फार्म ने बीज परिषद की 18 वीं बैठक में वर्ष 2020-21 उपलब्धि प्रतिवेदन एवं वर्ष 2021-22 की कार्ययोजना को रखा. कहा की राष्ट्रीय स्तर पर आवश्यक खाद्य उत्पादकता 3 टन प्रति हेक्टेयर है, जबकि झारखंड में मात्र 2 टन है. इस कमी को पूरा करने के लिए उन्नत बीजों का उत्पादन एवं इस्तेमाल बढ़ाना होगा .वर्ष 2021-22 के खरीफ एवं रबी मौसम के अंतर्गत धान्य, दलहनी एवं तिलहनी फसलों के विभिन्न श्रेणियों (प्रजनक, आधार, प्रमाणित बीज) के लगभग 10 हजार क्विंटल गुणवत्तायुक्त बीज उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है. इसमें भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के सहयोग से संचालित 5 सीड हब में दलहनी फसलों के 5 हजार क्विंटल बीज उत्पादन शामिल है. राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के अंतर्गत बीज ग्रामों में पैदा किए जाने वाला बीज उत्पादन अतिरिक्त होगा.

अनुसंधान निदेशक डॉ ए वदूद ने राज्य के उपयुक्त विभिन्न फसलों के किस्मों के विकास की दिशा में शोध एवं न्यूक्लियस सीड व ब्रीडर सीड उत्पादन विषय पर प्रकाश डाला. प्रसार शिक्षा निदेशक डॉ जगरनाथ उरांव ने जिला स्तर पर कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से पल्स सीड हब कार्यक्रम एवं किसानों की सहभागिता से बीज ग्राम की उपलब्धियों को बताया. बैठक में डॉ रवि कुमार ने नेशनल सीड प्रोग्राम, उपनिदेशक (कृषि) संतोष कुमार सिन्हा ने सरकार के बीज उत्पादन एवं बीज विनिमय कार्यक्रम एवं एनएससी क्षेत्रीय प्रबंधक सुरेंद्र कुमार ने राष्ट्रीय बीज निगम के गतिविधियों पर अपने विचारों को रखा. कार्यक्रम का संचालन श्रीमती शशि सिंह ने की. पल्स सीड हब कोऑर्डिनेटर डॉ सीएस महतो ने धन्यवाद ज्ञापन दिया. बैठक में डॉ एमएस यादव, डॉ सुशील प्रसाद, डॉ एमएस मल्लिक, डॉ एमके गुप्ता, डॉ डीके शाही एवं केवीके वैज्ञानिकों ने भाग लिया।

राज्य में इथेनॉल उत्पादन में निवेशकों के लिये कई सुविधाएः पूजा सिंघल

पेज 1 का शेष .....

वहीं प्रति कर्मी 13,000 रुपये एकमुश्त स्किल डेवलपमेंट सब्सिडी का भी प्रावधान है। यह राशि उन कर्मियों की ट्रेनिंग पर खर्च होगी, जो झारखंड के निवासी होंगे। इसके अतिरिक्त नये यूनिट में झारखंडवासी कर्मियों के ईएसआइ और ईपीएफ मद में भी पांच वर्षों के लिए 1000 रुपये का प्रावधान है। मौके पर उद्योग सचिव ने निवेशकों से उनके सुझाव भी आमंत्रित किये।

उसके पहले स्वागत भाषण में उद्योग निदेशक जितेंद्र कुमार सिंह ने इथेनॉल को लेकर वैश्विक स्थिति को बताया। उन्होंने ब्राजील और अमेरिका का उदाहरण देते हुए इथेनॉल उत्पादन के लाभों को बताया। वहीं उत्पाद एवं मद्य निषेध के डिप्टी कमिश्नर डॉ. राकेश कुमार ने निवेशकों को भरोसा दिलाया कि विभाग से जुड़े उनके किसी भी कार्य को एक पखवारे के भीतर निबटारा किया जायेगा। इथेनॉल प्रोडक्शन एंड प्रोमोशन पॉलिसी 2021 को लेकर हुए स्टेकहोल्डर मीट में लगभग 50 निवेशक शामिल थे। उसमें उद्योग सचिव, उद्योग निदेशक सहित रीजनल डायरेक्टर जेआइएडीए अजय कुमार सिंह भी शामिल थे।

उत्तराखंडःबाघों के संरक्षण के लिए टूटते कॉरिडोर हैं बड़ी चुनौती

एजेंसियां

बाघों की संख्या के मामले में उत्तराखंड तीसरे नंबर पर है, लेकिन बाघों के संरक्षण को लेकर राज्य के समक्ष कई चुनौतियां हैं

बाघों के संरक्षण के लिहाज से उत्तराखंड देश के अव्वल राज्यों में शामिल है। वर्ष 2018 में हुई बाघों की गिनती के मुताबिक उत्तराखंड में 442 बाघ हैं। बड़ी संख्या के साथ इनके संरक्षण की ज़िम्मेदारी भी बढ़ी है। डब्ल्यूडब्ल्यूएफ के डॉ अनिल कुमार सिंह ने कहा कि उत्तराखंड में बाघों के संरक्षण के लिहाज से कनेक्टिविटी पर काम करना बेहद जरूरी है। सड़कों पर बढ़ता ट्रैफिक और निर्माण कार्य बाघ समेत अन्य वन्यजीवों की एक जंगल से दूसरे जंगल में आवाजाही रोक रहा है। कार्बेट में बाघों की सोर्स पॉप्युलेशन मौजूद है। यहां से युवा बाघ अपने लिए क्षेत्र की तलाश में निकलते हैं और पूरे लैंडस्केप में बाघों की मौजूदगी दर्ज होती है। कार्बेट से हम पश्चिम की ओर बढ़ेंगे तो लैंसडौन वन प्रभाग आता है। जो आगे राजाजी से जुड़ता है।

लेकिन सड़कें बनने और उस पर ट्रैफिक का दबाव बढ़ने के साथ कार्बेट से लैंसडौन और लैंसडौन से राजाजी तक बाघों के कॉरिडोर जगह-जगह बाधित हो गए हैं। यही नहीं, राजाजी टाइगर रिजर्व के पूर्वी हिस्से चीला और पश्चिमी हिस्से मोतीचूर को जोड़ने वाले कॉरिडोर की कनेक्टिविटी में बाधा आ गई है।

सीसीएल में सेवानिवृत कर्मियों की भावभीनी विदाई

संवाददाता

रांची :सीसीएल मुख्यालय के विभिन्न विभागों में कार्यरत कर्मियों राजीब चन्द्र झा, महाप्रबंधक (ई एण्ड एम), ई एण्ड एम विभाग; एजाज अहमद, महाप्रबंधक (उत्खनन), उत्खनन विभाग; बिमल कुमार प्रसाद सिंह, मुख्य प्रबंधक (ई एण्ड एम), ई एण्ड एम विभाग को सीसीएल परिवार की ओर से सीसीएल मुख्यालयमें ''सम्मान समारोह''का आयोजन कर भावभीनी विदाईदी गई। पूरे सीसीएल से जुलाई माह में 92सेवानिवृत कर्मियों को भी कोविड-19 प्रोटोकॉल का पालन करते हुये सम्मान समारोह का आयोजन कर भावभीनी विदाई दी गई। सीसीएल द्वारा निर्मित सेवानिवृत कर्मियों पर फिल्म का प्रदर्शन 'सम्मान समारोह'के दौरान किया गया। फिल्म (विडीयो) के माध्यम से सेवानिवृत कर्मियों ने अपने-अपने कार्यानुभवों एवं विचारों को व्यक्त किया।

सीएमडी पी.एम. प्रसाद ने सेवानिवृत कर्मियों को कहा किमैं आप सभी को कंपनी की ओर से दूसरी पाली के लिए शुभकामनाएं देता हूं और आपके स्वस्थ्य एवं सुखद जीवन के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता हूं। सीसीएल परिवार सदैव आप सभी के साथ है।इस अवसर पर निदेश भोला सिंहने सभी सेवानिवृत हो रहे कर्मियों को शुभकामनाएं देते हुये कहा कि आप जहां भी रहे स्वस्थ्य रहे और अपने परिवार एवं समाजिक कार्यो में अधिक से अधिक समय व्यतित करें।

महाप्रबंधक (कल्याण) डॉ. ए.के. सिंह ने सेवानिवृत कर्मियों को कंपनी की ओर से स्वागत कर उन्हें सेवानिवृत बेनिफिट प्रदान किया। सम्मान समारोह को सफल बनाने में कल्याण विभाग के कर्मियों का विशेष योगदान रहा।

सीएमपीडीआई परिवार के 2 सदस्यों को सम्मानित किया गया

'संवाददात रांची : 30 जुलाई को सीएमपीडीआई परिवार के 2 सदस्यों को संस्थान के ''कांफ्रेंस हॉल'' में आयोजित एक सम्मान समारोह में सम्मानित किया गया। इनमें सुभाष सिंह-उचयफोरमेन (इलेक्ट्रीक) एवं धर्मराज भुईयां-उचयसहायक पर्यवेक्षक (परिवहन) शामिल हैं।

इस मौके पर सीएमपीडीआई के निदेशक (तकनीकी/पीएंडडी)ए0के0 राणा तथा महाप्रबंधक (समन्वयन)मनोज कुमार ने सेवानिवृत्त कर्मियों को पुष्पगुच्छ, मान-उचयपत्र, प्रतीक चिह्न व शॉल देकर कम्पनी की ओर सम्मानित किया और सभी सेवानिवृत्त कर्मियों के लिए उज्जवल भविष्य, उत्तम स्वास्थ्य, सुखी एवं दीर्घायु जीवन की कामना की। मंच का संचालन सहायक प्रबंधक (राजभाषा) अभय मिश्रा तथा धन्यवाद ज्ञापन वरीय प्रबंधक (कार्मिक) रास बिहारी ने किया।

पांचवी पास ने बनाई 20 से ज्यादा मशीनें, राष्ट्रपति ने भी सराहा

राजस्थान में श्रीगंगानगर जिले के रहने वाले 62 वर्षीय गुरमैल सिंह धौंसी, एक फैब्रीकेटर, मैकेनिक और आविष्कारक हैं। उन्होंने कम्पोस्ट मेकर, ट्री प्लूनर जैसी 20 से ज्यादा मशीनें बनाई हैं।

क्या आप कभी किसी ऐसे शख्स से मिले हैं, जिसने स्कूल की पढ़ाई भी पूरी न की हो, लेकिन एक से बढ़कर एक आविष्कार किए हों? चौंक गये न! तो चलिए, आज हम आपको राजस्थान के एक ऐसे ही शख्स की कहानी सुनाते हैं, जो केवल पांचवीं पास हैं लेकिन उन्होंने किसानों के लिए एक से बढ़कर एक कृषि यंत्र बनाए हैं।

यह कहानी राजस्थान के श्रीगंगानगर जिले में रहनेवाले 62 वर्षीय गुरमैल सिंह धौंसी की है। गुरमैल कहते हैं, ''सच कहूँ तो स्कूली पढ़ाई में मेरा मन नहीं लगता था। पिताजी के बहुत कहने पर मैं छठी कक्षा तक स्कूल गया और उसमें भी एक-दो पेपर में फेल हो गया। इसलिए मैं खुद को पौने छह कक्षा तक पढ़ा हुआ मानता हूँ। पढ़ाई छोड़ने के बाद मैंने एक 'वर्कशॉप' पर ही काम करना शुरू किया, जहां ट्रैक्टर के कल-पुर्जे बनते और ठीक होते थे। साथ ही, वे दूसरे कृषि यंत्र भी बनाते थे। कुछ समय तक वहां काम सीखने के बाद मैंने अपनी खुद की वर्कशॉप शुरू की।

साल 1982 में उन्होंने अपनी छोटी-सी वर्कशॉप, धौंसी मैकेनाइजेशन की शुरुआत की थी, जो आज एक कंपनी बन चुकी है। अब इलाके में गुरमैल सिंह की पहचान एक आविष्कारक के तौर पर है। बतौर फैब्रीकेटर और मैकेनिक अपना करियर शुरू करने वाले गुरमैल ने कभी नहीं सोचा था कि वह एक दिन बड़ी-बड़ी मशीनें बनाने लगेंगे। द बेटर इंडिया से बात करते हुए अपने पूरे सफर के बारे में विस्तार से बताया।

सरसों की थ्रेसिंग मशीन से हुई शुरुआत

गुरमैल ने जब अपनी खुद की वर्कशॉप शुरू की, तो लोगों के ट्रैक्टर और दूसरी मशीनों की मरम्मत करने के साथ-साथ, वह कृषि यंत्र भी बनाते थे। वह कहते हैं कि बाजार में उपलब्ध कृषि यंत्रों के अलावा, वह किसानों की जरूरत के हिसाब से भी काम करना चाहते थे। जैसे उन्होंने देखा कि सरसों की कटाई के बाद, इसकी थ्रेसिंग के लिए किसान परिवारों को बहुत मेहनत करनी पड़ती है। हाथों से सरसों को कूटना, फिर साफ़ करना, और इसके बाद भी उन्हें अच्छे नतीजे नहीं मिलते थे। इसलिए, उन्होंने सोचा कि क्यों न इस काम के लिए कोई मशीन हो।

एक आयोजन के दौरान गुरमैल सिंह 1986 में उन्होंने सरसों की थ्रेसिंग मशीन बनाई, जो हाथों-हाथ बिकी। उन्होंने आगे कहा, ''हमारे गाँव में कुछ लोग गेहूं की कटाई और थ्रेसिंग के लिए हार्वेस्टर कंबाइन मशीन लेकर आए। लेकिन मैंने देखा कि इस मशीन का काम सिर्फ एक ही मौसम में था, जब गेहूं की फसल होती थी। मुझे लगा कि इस मशीन में बदलाव करके इसे दूसरी फसलों में भी इस्तेमाल में लेना चाहिए। इसलिए मैंने सरसों की थ्रेसिंग मशीन भी कंबाइन में ही जोड़ दी। हालांकि, शुरुआत में लोग मुझसे अपनी मशीन मॉडिफाई करवाने में कतराते थे, क्योंकि उन्हें लगता था कि मैं पैसे ज्यादा लेता हूँ। ऐसे में, एक आदमी ने उन्हें सलाह दी कि वह किसानों को मशीन तैयार करने का सामान लाने के लिए कहें और खुद उनसे सिर्फ अपनी फीस लें। यह तरीका काम कर गया। उन्होंने कहा कि उन्होंने अलग-अलग तरह की मशीनें बनाई, जिनमें से कुछ में सफलता मिली, तो कई बार वह असफल भी हुए। लेकिन हमेशा कुछ अलग करने की उनकी कोशिश कभी नहीं रुकी। अब तक वह 20 से ज्यादा मशीनें बना चुके हैं, जिनमें थ्रेसिंग मशीन के अलावा, लोडर, वाटर लिफ्टर, मिनी कंबाइन, रिज मेकर, वुड चीपर, कम्पोस्ट मेकर, ट्री प्लूनर जैसी मशीनें शामिल हैं।

बनाई खाद बनाने वाली मशीन

साल 2007 में गुरमैल सिंह ने 'कम्पोस्ट मेकर' और 'ट्री प्लूनर' मशीन बनाई। इन दोनों मशीनों के लिए उन्हें राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सराहना मिली है। वह कहते हैं, ''इफको के चेयरमैन रहे स्वर्गीय सुरेंद्र जाखड़, हमेशा मेरे लिए प्रेरणास्रोत रहे। उन्होंने मेरी बनाई कुछ मशीनों को देखा और मुझसे कहा कि मैं अपनी किसी भी मशीन की टेस्टिंग उनके खेतों में कर सकता हूँ। उन्होंने ही मुझे 'कम्पोस्ट मेकर', और 'ट्री प्लूनर' मशीन बनाने के लिए कहा था।'' जाखड़ ने उन्हें 2006 में एक ऐसी मशीन बनाने के लिए कहा, जिससे कि कृषि अपशिष्ट से कम समय में खाद बन जाए।

कंपोस्ट मेकर : जाखड़ ने पहले गुरमैल को एक वर्मीकम्पोस्टिंग यूनिट दिखाई। इसे देखने के बाद, गुरमैल ने समझा कि केंचुआ कैसे खाद बनाता है और इस काम में कितना समय लगता है। वह कहते हैं, ''मैंने मशीन पर काम करना शुरू किया और पहला मॉडल तैयार किया। इस मशीन को ट्रैक्टर की मदद से चलाया जा सकता था और यह कृषि अपशिष्ट जैसे तूरी, भूसी, टहनियों और पत्तों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर पाउडर बना देती थी। लेकिन इस मशीन में एक समस्या थी कि इससे बनने वाली खाद में पोषण कम होता था। इसलिए, गुरमैल ने इस बारे फिर अपनी मशीन पर काम किया। इस बार उन्होंने ऐसा सिस्टम तैयार किया कि जब मशीन पराली की कटाई करे, तो बीच-बीच में इस पर पानी छिड़का जाए और इसे हवा भी लगती रहे। साथ ही, उन्होंने मशीन में 35 डिग्री से ज्यादा और 60 डिग्री से कम तापमान रखा, ताकि कृषि अपशिष्ट जल्दी गलने व सड़ने लगे। उन्होंने इस मशीन से बनी खाद को लैब में टेस्ट कराया। उन्हें पता चला कि उनकी बनाई खाद में अच्छी मात्रा में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटैशियम है। उनकी यह मशीन सफल हो गयी और उन्होंने इसे 'कंपोस्ट मेकर' नाम दिया।

उनकी बनाई मशीन से यह काम 30-40 दिनों में ही हो जाता है। ''दूसरी मशीनों से एक टन खाद बनाने की लागत लगभग तीन हजार रुपए आती है। लेकिन मेरी मशीन मात्र 2 रुपए/टन की लागत से काम करती है। 1200 टन पराली या अन्य कृषि अपशिष्ट को प्रोसेस करने में यह मशीन मात्र एक घंटे का समय लेती है,'' उन्होंने कहा। अब तक वह लगभग 150 मशीनें बेच चुके हैं। BetterIndia

फल खाने के बाद न करें ये गलतियां

निशा कुमारी

हममें शायद ही कोई होगा जिसे फल पसंद न हो? प्रकृति से हमें इतने प्रकार के देशी विदेशी फल दिये हैं कि हर कोई किसी न किसी फल का रसिक होता है। किसी का पसंदीदा फलों का राजा आम होता है तो किसी के लिये सेव सबसे प्रिय होते हैं किसी को अमरूद, किसी को अंगूर तो किसी का सबसे प्रिय तरबूज भी हो सकता है। आदिमानव भी भूख शांत करने के लिये फलों पर ही निर्भर थे? बाद में उन्होंने अनाज उपजाना और शिकार कर उसे पका कर खाना सीखा। फल सबसे शुद्ध और सर्वोत्तम आहार हैं, यह मन मिजाज ठिक करने के साथ ही औषधीय और पौष्टिक गुणों से भरपूर होते हैं। यही कारण है कि देवताओं को भोजन स्वरूप अर्पित करने से लेकर हमारे पर्व त्यौहारों में उपवास किये व्यक्ति भी फलाहार करते हैं।

फलों में काफी सारे पौष्टिक तत्व, मिनरल्स, विटामिन और फाइबर पाए जाते हैं, इसलिए ज्यादातर स्वास्थ्य विशेषज्ञ हमें फल खाने की सलाह देते हैं. यदि व्यक्ति रोजाना एक फल खाए तो उसे शरीर के सभी जरूरी पोषक तत्व प्राप्त हो जाते हैं. लेकिन फल खाने के बाद कई बार हम पानी पीने की गलती कर बैठते हैं, जिसकी वजह से फल का फायदा मिलने की बजाय हमारे शरीर को नुकसान पहुंचता है. इसलिए हमें फल खाने का सही तरीका जानना बहुत जरूरी है, ताकि हम इसका पूरा फायदा ले सकें।

- फल में नेचुरल शुगर होती है. शुगर किसी भी चीज में किण्वन शुरू कर देती है. इसलिए फल के साथ कुछ भी खाने या पीने के लिए मना किया जाता है.
- फलों में यीस्ट भी पाया जाता है, जो पेट में एसिड बनाता है. पानी पीने से पेट में एसिड की मात्रा बढ़ जाती है, ऐसे में पाचन संबन्धी समस्याएं शुरू हो जाती हैं.
- फलों में 80 से 90 फीसदी पानी होता है. ऐसे में इसे अतिरिक्त पानी की जरूरत नहीं होती. लेकिन अगर आप फल के ऊपर से और पानी पीते हैं तो आपको उल्टी या दस्त की समस्या हो सकती है.
- फल खाकर पानी पीने से पेट में एसिडिटी की समस्या होने की आशंका काफी बढ़ जाती है क्योंकि पानी पीने से खाना पचाने वाले एसिड का निर्माण बहुत धीमा हो जाता है. ऐसे में ठीक से खाना पच नहीं पाता और एसिडिटी, सीने में जलन और गैस जैसी समस्याएं होती हैं.

क्या है फल खाने का सही तरीका: फल खाने का सही तरीका है कि फल खाने के 45 मिनट पहले और 45 मिनट बाद तक कुछ न खाया-पिया जाए क्योंकि फल अपने आप में पूर्ण डाइट का काम करता है. फल में वो सभी पोषक तत्व मौजूद होते हैं, जो आपके शरीर की जरूरत होते हैं. यही वजह है कि पहले के समय में ऋषि मुनि सिर्फ फल खाकर अपना जीवन जी लेते थे. यदि आप फल को सही तरीके से खाते हैं तो आपको उसके सारे पोषक तत्व सही तरीके से मिल पाते हैं. इसके अलावा खट्टे फल जैसे- अंगूर, संतरा, मौसंबी आदि को एकदम खाली पेट न खाएं वर्ना एसिडिटी की समस्या हो सकती है।

दक्षिण भारत के इस चालक ने रिक्शे पर ही ठंढक के लिये उगा डाले हरे घास

यमुना में वाटर टैक्सी चलाने की योजना फेल

अवली वर्मा

वर्ष 2016 में दिल्ली की यमुना नदी पर केंद्र सरकार ने वाटर-टैक्सी परियोजना शुरू की और पांच साल बाद बताया कि यह संभव नहीं है। ऐसे में यह सवाल उठता है कि क्या बिना उचित अध्ययन के ही सरकार ने ऐसी घोषणा कर दी। सरकार जल यातायात को प्रोत्साहित कर रही है पर इनसे जुड़े अध्ययन और आकलन सार्वजनिक नहीं किया जा रहा है। ऐसे में लोगों के लिए यह समझना काफी कठिन है कि किसी योजना की घोषणा के पहले क्या तैयारी की गयी है और भविष्य में इसके क्या परिणाम होने वाले हैं।

योजना थी दिल्ली में यमुना नदी में वाटर-टैक्सी चलाने की। वर्ष 2014 से 2019 तक दिल्ली में यमुना नदी पर 'वाटर-टैक्सी' परियोजना को शुरू और पूरा करने के कई दावे किये गये। वादे के अनुसार अगर यह परियोजना सफल होती तो दिल्ली से आगरा तक वाटर-टैक्सी के जरिए लोग यातायात और पर्यटन का लाभ उठाते। यही नहीं 2014 में केन्द्रीय मंत्री नितिन गडकरी ने तो यह भी कहा, ''देश की राजधानी और आगरा के बीच यमुना नदी जलमार्ग को यात्री और माल की ढुलाई के लिए उपयोग किया जा सकेगा।'' वर्तमान स्थिति यह है कि इन तमाम दावों और घोषणाओं के बाद दिल्ली में यमुना नदी पर वाटर-टैक्सी चलते देखने का सपना टूट चुका है। इसके साथ ही यमुना पर घोषित राष्ट्रीय जलमार्ग -110 पर प्रस्तावित जल-विमान योजना सिर्फ कागजी परियोजना तक सीमित होने की कगार पर है।

शिपिंग मंत्रालय के भारतीय अंतर्देशीय जलमार्ग प्राधिकरण ने दिल्ली में यमुना नदी पर यात्रियों के यातायात और पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए यमुना वाटर-टैक्सी परियोजना का प्रस्ताव लाया था। उद्देश्य था- दिल्ली जैसे भीड़भाड़ वाले शहर में यातायात का एक नया माध्यम विकसित करना, पर्यटन को बढ़ावा देना। जाहिर है इससे रोड-ट्रैफिक को कम करने का सपना भी देखा गया था। ये सारे उद्देश्य अपनी जगह पर सही और महत्त्वपूर्ण हैं पर इस पर भी गौर करना जरूरी है कि क्या दिल्ली की ट्रैफिक कम करने और पर्यटन को प्रोत्साहित करने के लिए यमुना में वाटर-टैक्सी शुरू करना ही एकमात्र विकल्प है! साथ ही एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह भी है कि क्या यमुना पर वाटर-टैक्सी परियोजना को चालू करना संभव और व्यवहारिक है? पर पहले उन सरकारी वादों और दावों की पड़ताल में कुछ और बातें निकल कर आयीं हैं।

वर्ष 2016 में शिपिंग (पोत परिवहन) मंत्रालय ने लोक सभा में बताया, ''दिल्ली में यमुना नदी (राष्ट्रीय जलमार्ग -110) के वजीराबाद से फतेहपुर जाट के 16 किलोमीटर के हिस्से में वाटर-टैक्सी परियोजना को शुरू करने के लिए इसकी विस्तृत परियोजना रिपोर्ट एवं तकनीकी निर्देशों को अंतिम रूप दिया जा चुका है। यह भी बताया गया कि इस परियोजना की अनुमानित लागत 31.70 करोड़ रूपये है। इसमें भूमि की लागत को शामिल नहीं किया गया था। इसके साथ यह भी बताया गया कि यह परियोजना कार्य सौंपे जाने के छः महीने में पूरी हो जानी है। पर इस घोषणा को पांच साल गुजर गए और इससे संबंधित विस्तृत परियोजना रिपोर्ट अभी तक सार्वजनिक नहीं है। जमीनी स्तर पर कोई कार्य शुरू ही नहीं हुआ है। स्थानीय लोगों ने इस परियोजना के बारे में पढ़ा जरूर था पर इसको लेकर वे तब भी नाउम्मीद ही थे। और वैसा ही हुआ। हाल ही में आई खबर से इसकी पुष्टि हो गयी। यह साफ़ हो गया कि इस परियोजना की फाइल अब बंद की जा चुकी है।

औषधीय गुणों से परिपूर्ण पर उपेक्षति उपज है अरण्डी

विद्या सागर पाठक

भारत मे बहुत सारे पेड़-पौधों की भरमार है । इनमें से कई पेड़ पौधें ऐसे हैं जिन्हे हम रोज देखते हैं लेकिन उसके गुणों से अंजान हैं । ऐसा ही एक उपेक्षति सा तिलहन है अरण्डी । इसे अंग्रेजी में कास्टर भी कहते हैं । गांवों में लोग इसे रेड़ी के नाम से भी जानते हैं । अरण्डी ' रिकिनस कम्यूनिस ' प्रजाति का पेड़ है । यह दो प्रकार की होती है । छोटी अरण्डी जिसका आकार 1 सेमी तक होता है । दूसरी बड़ी अरण्डी जो करीबन सेम के बीज के आकार जितनी बड़ी होती है। इसके बीज चीतकबरे रंग के होते हैं। इसके बीजों से तेल का निर्माण होता है। जिसके कई फायदे हैं ।

अरण्डी के तेल को घुटनों मे लगातार लगाने से दर्द से राहत मिलती एवं दुबारा दर्द की शिकायत भी नहीं रहती है । अरण्डी के तेल के उपयोग से त्वचा में पड़ने वाली झुरियां कम हो जाती है । अगर किसी को मल-मूत्र होने मे समस्या हो रही है तो हल्के गर्म पानी मे थोड़ी मात्रा अरण्डी तेल मिलाकर पीने से ये समस्या खत्म हो जाती है एवं पेट मे जमी गंदगी भी मल के माध्यम बाहर निकल जाती है। पहले गावों में इसकी उपयोगिता के चलते इसकी पूछ थी, अब इसे बहुत ही उपेक्षित और बेकार माना जाता है। लेकिन अरण्डी बहुत ही उपयोगी तिलहन है।

गंगा बेसिन में 20,685 हेक्टेयर क्षेत्र में फैली हैं 4,707 हिमनद झीलें

एजेंसियां

जल शक्ति मंत्रालय द्वारा जारी एटलस के मुताबिक, गंगा बेसिन में मौजूद 4,707 हिमनद झीलों में से सबसे ज्यादा 2,437 कोसी बेसिन में हैं। इसके बाद घाघरा में 1,260 हिमनद झीले हैं

गंगा बेसिन ग्लेशियल लेक एटलस को जारी किया गया है, जिससे पता चला है कि गंगा बेसिन में 4,707 ग्लेशियल लेक हैं जोकि 20,685 हेक्टेयर क्षेत्र में फैली हैं। इस एटलस को जल शक्ति मंत्रालय (जल संसाधन, आरडी एंड जीआर) के सचिव पंकज कुमार द्वारा जारी किया गया है। यह एटलस गंगा नदी के उद्गम से लेकर हिमालय की तलहटी तक इस बेसिन में खोजी गई 4,707 हिमनद झीलों पर आधारित है, जिनको इस एटलस में मानचित्रित किया गया है। इनका कुल जलग्रहण क्षेत्र करीब 2,47,109 वर्ग किलोमीटर का है। गंगा नदी बेसिन के इस अध्ययन में भारत के साथ-साथ सीमा पार के क्षेत्रों को भी शामिल किया गया है।

गंगा बेसिन में मौजूद 4,707 हिमनद झीलों में से सबसे ज्यादा 2,437 कोसी बेसिन में हैं। इसके बाद घाघरा में 1260, गंडक में 624, ऊपरी गंगा बेसिन में 295, सारदा में 55 और यमुना बेसिन में 36 हिमनद झीले हैं।

डीओडब्ल्यूआर, आरडी एंड जीआर के सचिव पंकज कुमार ने इसरो, एनआरएससी और एनएचपी की टीम को उनके द्वारा तैयार इस एटलस के लिए बधाई देते हुए कहा कि यह एटलस हिमनद झीलों के प्रबंधन के साथ-साथ ग्लेशियल लेक आउटबर्स्ट फ्लड (जीएलओएफ) और जलवायु परिवर्तन के संभावित खतरों को कम करने में भी मददगार होगी। साथ ही यह शोधकर्ताओं, जल संसाधन पर काम कर रहे लोगों, आपदा प्रबंधन प्राधिकरणों और अन्य के लिए भी फायदेमंद होगी।

धुंए से ढका उत्तरी अमेरिका, जारी की गई चेतावनी

एजेंसियां

हाल ही में धधकते जंगलों से निकले धुंए ने पूर्वी अमेरिका को अपने आगोश में ले लिया था, स्थिति इतनी बदतर हो चुकी थी कि पूर्वी अमेरिका के कई हिस्सों में तो वायु गुणवत्ता को लेकर रेड और ऑरेंज अलर्ट तक जारी करना पड़ा था

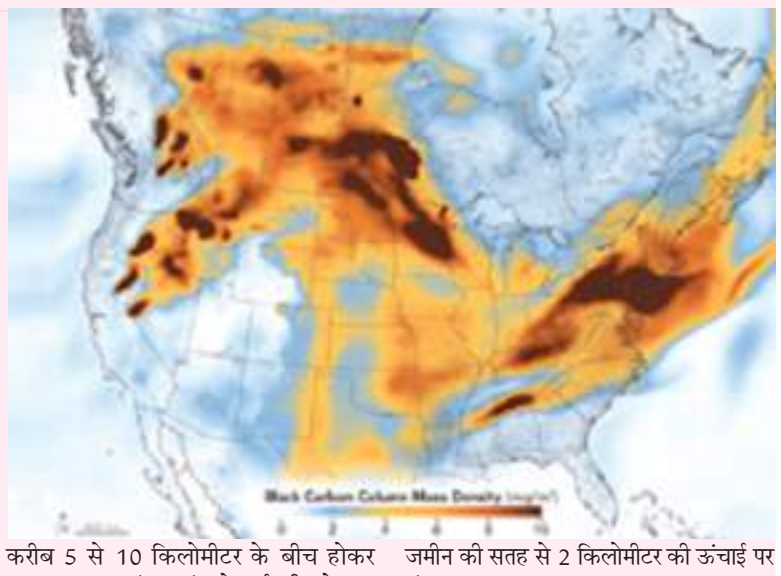

हाल ही में उत्तरी अमेरिका के पश्चिमी हिस्सों में धधकते जंगलों से निकले धुंए ने पूर्वी अमेरिका को अपने आगोश में ले लिया था, स्थिति इतनी बदतर हो चुकी थी कि पूर्वी अमेरिका के कई हिस्सों में तो वायु गुणवत्ता को लेकर रेड और ऑरेंज अलर्ट तक जारी करना पड़ा था।

हालांकि देखा जाए तो यह कोई पहला मौका नहीं है जब उत्तरी अमेरिका के पश्चिमी हिस्सों में लगी आग ने पूर्वी अमेरिका पर असर डाला हो। हाल के वर्षों में पश्चिमी उत्तरी अमेरिका में लगी आग और उससे निकलने वाला धुआं हर साल गर्मियों में कई बार उत्तरपूर्वी अमेरिका और कनाडा के ऊपर से गुजरा है पर इस पर अक्सर किसी का ध्यान नहीं जाता था, क्योंकि अपने स्रोत से काफी दूर तक फैलने वाला यह धुंआ आमतौर पर काफी ऊंचाई पर करीब 5 से 10 किलोमीटर के बीच होकर गुजरता था, जहां हवाएं उसे पूर्व की ओर उड़ा ले जाती थी।

लेकिन इस सप्ताह स्थिति काफी अलग रही है, क्योंकि 20 से 21 जुलाई, 2021को पूर्वी अमेरिका में इस धुंए का प्रकोप महसूस किया गया है। नासा के माइक्रो-पल्स लिडार नेटवर्क (एमपीएलएनईटी) और एरोसोल रोबोटिक नेटवर्क (एरोनेट) से प्राप्त आंकड़ों से पता चला है कि इस क्षेत्र में भारी मात्रा में धुआं जमीन की सतह से 2 किलोमीटर की ऊंचाई पर मंडरा रहा था।

इस धुंए ने आसमान को काला कर दिया और सूर्यास्त की लालिमा को कहीं ज्यादा बढ़ा दिया था। स्थिति इतनी बदतर हो गई थी कि वायु गुणवत्ता में आ रही गिरावट को देखते हुए कई जगह प्रशासन को रेड और ऑरेंज अलर्ट तक जारी करना पड़ गया था। यही नहीं कुछ क्षेत्रों में तो हवा में धुंए की गंध तक महसूस की गई थी।

स्टिंग रे भी है रांची ओरमांझी के मछली घर में

नेहा कुमारी

रांची :ओरमांझी स्थित जैविक उद्यान के सामने बिरसा मुंडा मछली घर है। यहां सैकड़ों प्रकार की मछलियां है। बच्चों की तो छोड़िये यहां बूढ़े हों जवान सभी इन अद्भूत मछलियों को देखने में रम जाते हैं।

यहां कुल 58 एक्वेरियम बनाए गए हैं इनमें अलग-अलग प्रजाति की मछलियां हैं जो सब को अपनी और आकर्षित करता है सभी मछलियों की अपनी अलग अलग पहचान और अलग अलग खासियत है। इनमें से एक है "स्टिंग रे मछली " ऐसे तो यह मछली काफी खतरनाक मानी जाती है और समुद्र में भी पाई जाती है इसकी कुछ प्रजातियां नदियों में भी पायी जाती है। ओरमांझी मछली घर में यह मछली भी देखने को मिलेगी। स्टिंग रे जहरीली भी होती है इसलिये दक्षिण अमरीकी मछुआरे इसे देखते ही मार डालते हैं। प्रसिद्ध जीवविज्ञानी स्टीव इरविन की मौत भी सिटंग रे की विशाल समुद्री प्रजाति के हमले में हो गयी थी। इस मछली के पूंछ में डंक होते हैं और साथ ही इसकी कुछ प्रजातियां जानलेवा बिजली के झटके भी मारती हैं

●यह मछली साउथ अमेरिका में बहुतायत से पाई जाती है●इनमें हड्डियां नहीं होती है यह हड्डी रहित मछली है● इनके पूछ में जहरीले डंक होते हैं ●मौसम ठंडे होने पर या माइग्रेट हो जाते हैं● जापान के तलवारों को बनाने के लिए स्टिंगरे त्वचा का उपयोग किया जाता है● इनका जहर बहुत ही घातक होता है●इसकी छज्ञेटी बड़ी 70 से अधिक प्रजातियां होती हैं● तो यह थे इसके कुछ रोचक तत्व अब किस बात का इंतजार है जाइए और इस मछली को देख आइये रांची ओरमांझी मछली घर में

E ZONE CARE

Software Problem, Motherboard Chip-Level Repair, Laptop AC Adapter Repair and Replacement, Laptop LCD Screens Repair and Replacement, Dead Laptop Problems, No Display Problem, LCD Dim Display Problem, LCD White Display Problem, BIOS Password Problem, all type of Laptop repair and service

● Repair your laptop with 3-month warranty.

info@ezonecare.in, ezonecare.in
Rospa Tower 3RD Floor, Main Road, Ranchi
93108 96575, 70047 69511
Mon - Fri 10:30 am - 7:00 pm
SUNDAY CLOSED

हिमाचल में दरक रहे हैं पहाड़ के पहाड़, 462 सड़कें बंद

रोहित पराशर

चालू मानसून सीजन में हिमाचल में बादल फटने और भूस्खलन की 30 बड़ी घटनाएं हो चुकी हैं, जिनमें 30 से अधिक लोगों की जानें जा चुकी हैं

हिमाचल में हर रोज प्राकृतिक आपदाएं देखी जा रही हैं। पिछले 24 घंटे में बारिश के कारण हुए भूस्खलन की वजह से 462 सड़कें बंद पड़ी हैं। जिसकी वजह से प्रदेश के विभिन्न जिलों में हजारों पर्यटक फंसे हुए हैं। 30 जुलाई को भूस्खलन की बड़ी घटना सिरमौर जिले में देखने को मिली जहां पौंटा साहिब से शिलाई को जोडने वाले नेशनल हाईवे 707 का 100 मीटर से बड़ा हिस्सा ढह गया। यह भूस्खलन इतना भयावह था पहाड़ी का एक पूरा हिस्सा धंस गया और इससे आस-पास के लोग सहम गए। सड़क का एक बड़ा हिस्सा ढह जाने की वजह से शिलाई क्षेत्र से संपर्क टूट गया है। वहीं दो दिन पहले लाहौल-स्पीति में नाले में आई बाढ़ की वजह से अभी तक 7 शव बरामद किए जा चुके हैं जबकि अभी भी 3 लोग लापता बताए जा रहे हैं। लाहौल स्पीति में 5 से अधिक स्थानों में नालों में बाढ़ा आने की वजह से ज्यादातर पुल टुट चुके हैं। जिसकी वजह से उदयपुर, पांगी सड़क बंद पड़ी हैं और इस स्थान पर देशभर के 241 पर्यटक फंसे हुए हैं। हिमाचल में बढ़ेंगी प्राकृतिक आपदाएं, पहले ही कर दी गई थी भविष्यवाणी

पहाड़ी दरकने की घटना में हिमाचल के किन्नौर में 9 पर्यटकों की मौत हो चुकी है। इसके अलावा मनाली लेह हाईवे भी दारचा के पास बंद पड़ा है। जिसकी वजह से पर्यटकों को मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है।भारी लैंडस्लाइड की वजह से शिलाई मुख्यमार्ग बंद हो गया है और सतौन से कमरउ व शिलाई-हाटकोटी की तरफ जाने के लिए पांवटा साहिब से वैकल्पिक सडक मार्ग कफोटा-वाया जाखना जोंग-किलौर का इस्तेमाल कर सकते हैं। उन्होंने बताया कि इस भूस्खलन में किसी भी प्रकार की जान माल की हानि नहीं हुई है

गौरतलब है कि भारी बारिश की वजह से सबसे ज्यादा 165 सड़के मंडी जिला में बंद हैं। शिमला में 116, कुल्लू में 47, हमीरपुर में 37, सिरमौर में 30, कांगड़ा में 21, लाहौल-स्पीति में 19, चंबा में 14, सोलन में 12, किन्नौर में छह और उना में एक सड़क अवरूद्ध है। बिलासपुर में कोई सड़क बंद नहीं है। पांच जिलों में 94 पेयजल परियोजनाओं के ठप पड़ गई हैं। कुल्लू में सबसे ज्यादा सर्वाधिक 41 पेयजल परियोजनाएं ठप हैं। जबकि लाहौल-स्पीति में 35, सिरमौर में नौ, शिमला में सात और चंबा में दो पेयजल परियोजनाएं बंद हैं। इसके अलावा 41 ट्रांसफार्मर भी बंद हैं। लाहौल-स्पीति और चंबा में 18-18 और सिरमौर में चार और मंडी में एक ट्रांसफार्मर ठप है। बारिश के कारण 29 कच्चे व पक्के मकान और 14 गौशालाएं क्षतिग्रस्त हुई हैं।

हिमाचल की राजधानी शिमला के उपनगर शोघी के पास कालका-शिमला नेशनल हाईवे पर पहाड़ी से गिरे पत्थर की चपेट में आने से एक कार क्षतिग्रस्त हुई। हादसे में चार सैलानी घायल हुए हैं। राजस्थान से ट्रैकिंग के लिए लाहौल-स्पीति आए तीन युवक संदिग्ध परिस्थितियों में लापता हो गए हैं। ये तीनों सिस्सू में एक होटल में रूके थे, लेकिन पिछले तीन दिनों से वापिस नहीं लौटे। हिमाचल में अभी तक हुई बारीश की वजह से सबसे अधिक नुकसान लाहौल स्पीति में देखा गया है। लाहौल क्षेत्र में नालों बाढ़ की वजह से ज्यादातर सड़कें और पुल क्षतिग्रस्त हो चुके हैं। जिसकी वजह से राहत कार्य में मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है। वहीं लाहौल में केवल एक ही फसल ली जाती है और आजकल मटर और अन्य सब्जियों की तैयार फसलों को मंडियों तक न पहुंचा पाने की वजह से किसानों को भारी नुकसान का सामना करना पड़ रहा है।

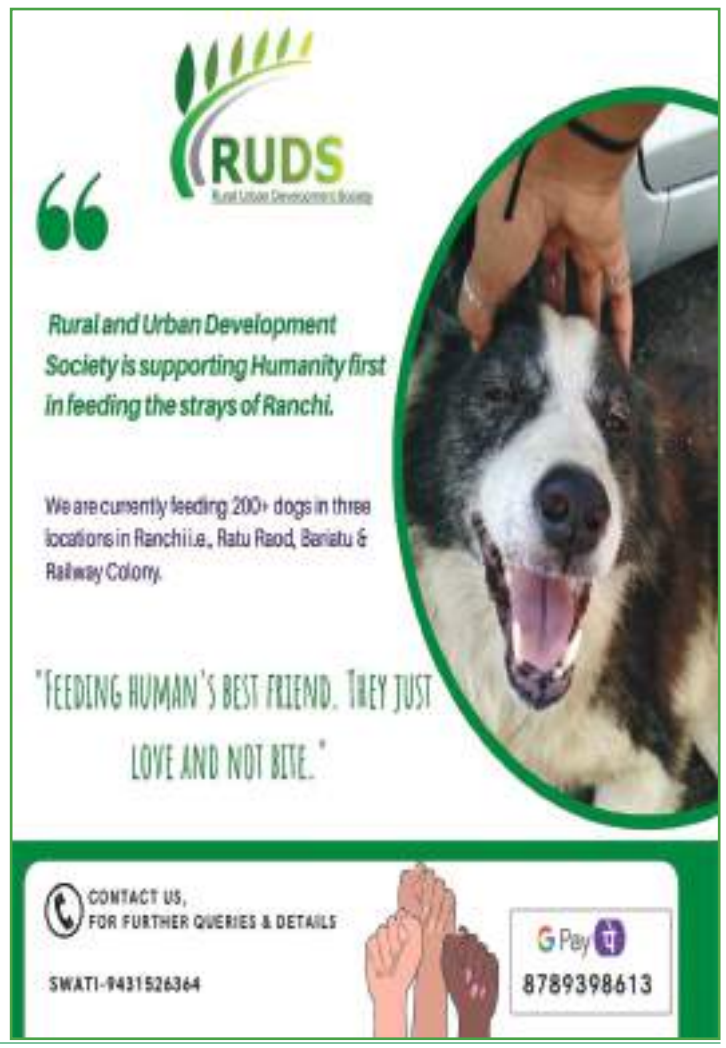

अखबार के स्वामी सन कम्युनिकेशन के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक मनोरंजन सिंह द्वारा मेसर्स डी. बी. कॉर्प लिमिटेड,प्लॉट नं535 एवं 1272 ललगुटवा पुलिस स्टेशन, रातू, रांची (झारखंड) से मुद्रित एवं सन कम्युनिकेशन,अपोजिट कब्रिस्तान गेट नं.-2,रातू रोड, रांची- 834001 (झारखंड) से प्रकाशित। संपादकः एम.के.शर्मा * (पी.आर.बी. अधिनियम के तहत खबरों के चयन के लिये उत्तरदायी)आर.एन.आइ. पंजीयन क्रमांक : **JHAHIN/2019/78094**, email:greenrevolt2019@gmail.com.☎ 0651-2283018, 8539978825, 8825374626. समस्त विवाद रांची न्यायालय के अधीन होंगे।